ISSN-09

योजना

मास्क अप इंडिया

दिसम्बर 2020 | विकास को समर्पित मासिक | ₹ 22

भारतीय समाज

प्रमुख आलेख
सीमांत तथा वंचित वर्गों का कल्याण
थावरचंद गेहलोत

विशेष आलेख
महिला सुरक्षा : कार्यस्थल और घर पर समानता
रेखा शर्मा

फोकस
भुखमरी उन्मूलन : सभी के लिए भोजन
नरेश गुप्ता

दिव्यांगजनों के लिए नीतियां
दीपा पलनिअप्पन

टेली-कानून – कानूनी सहायता का अच्छा विकल्प

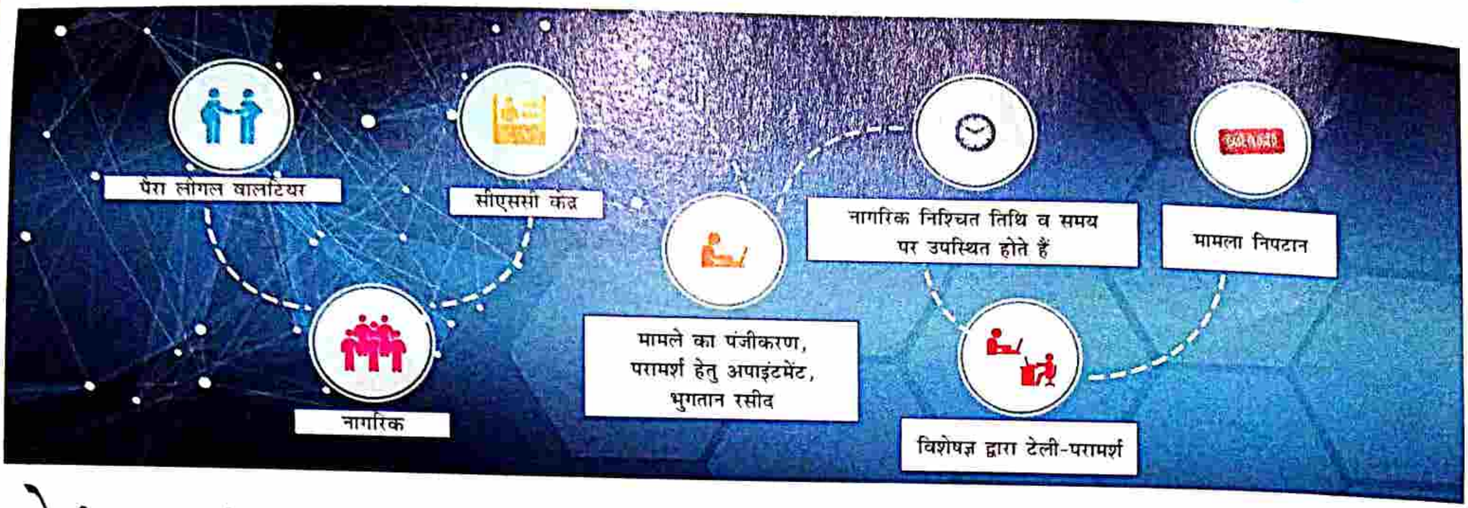

टेली-कानून कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य मुकदमे से पहले ही मामलों को निपटाना है। यह गरीब और वंचित लोगों को वकीलों के एक समूह से जोड़ता है। ये ऐसे वकील होते हैं जो न्याय विभाग और सीएससी-ई गवर्नेंस सेवाओं द्वारा चुने जाते हैं या राज्य/जिला कानूनी सेवा प्राधिकरण से जुड़ी कमेटी में पंजीकृत होते हैं और ग्राम पंचायत स्तर में मौजूद आम सूचना केंद्रों पर मौजूद वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग और टेलीफोन सेवाओं के इस्तेमाल से कानूनी सलाह और सेवाएं मुहैया कराते हैं।

इस कार्यक्रम के तहत, वकीलों के ग्रुप को गरीब, शोषित और वंचित लोगों से जोड़ने के लिए पंचायत स्तर पर आम सूचना केंद्र में मौजूद वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, टेलीफोन/तत्काल कॉलिंग जैसी स्मार्ट टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल किया जाता है, ताकि इन लोगों को सही समय पर अहम कानूनी सलाह मिल सके।

टेली-कानून सेवा का मकसद कानूनी समस्याओं की जल्द पहचान करके जरूरी पहल करना और ऐसी समस्याओं को रोकना है। यह सेवा एनएएलएसए और सीएससी -ई गवर्नेंस की तरफ से मुहैया कराए जा रहे कार्यकर्ताओं के जरिये समूहों और समुदायों तक पहुंचाई जा रही है। ये जमीनी कार्यकर्ता गांव-गांव जाकर मोबाइल एप्लिकेशन की मदद से आवेदकों का पंजीकरण कर उनकी समस्याओं पर सलाह के लिए समय तय करते हैं। लोगों को नियमित तौर पर कानूनी सेवाओं और सलाह मुहैया कराने के लिए वकीलों का एक समूह तैयार किया गया है।

टेली-कानून: खास बातें

1. कानूनी सेवा प्राधिकरण 1987 के खंड 12 के मुताबिक, इस कार्यक्रम के जरिये अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के लोगों (महिलाएं, बच्चे समेत) को मुफ्त कानूनी सलाह देने की बात है। बाकी समुदाय के लोगों को 30 रुपये फीस देनी होगी।
2. दूर-दराज के इलाके में भी बेहतर तरीके से यह सेवा सुनिश्चित करने के लिए, टेली-कानून एप्लिकेशन बनाया गया है, ताकि संबंधित कानूनी कार्यकर्ता (पैरा लीगल वालंटियर-पीएलवी) मामलों का पंजीकरण कर सकें।
3. टेली-कानून के वेब पोर्टल (http://www.tele-law.in/) पर कार्यक्रम के बारे में 22 भाषाओं में विस्तार से जानकारी उपलब्ध है। टेली-कानून के डैशबोर्ड पर पंजीकृत मामलों और सलाह के बारे में रियल-टाइम डेटा मौजूद होता है।
4. टेली-कानून मोबाइल एप्लिकेशन के बारे में ई-गाइड, टेली-कानून के पोर्टल पर आधारित है।

पंजीकृत मामले	ऐसे मामले जिनमें सलाह दी गई	मामले जिनकी सुनवाई नहीं हुई	सीएससी केंद्र
423405	409432	13973	29860

4 नवंबर 2020 तक

अहम सफलता

30 अक्टूबर 2020 को टेली-कानून के जरिए कानूनी सलाह हासिल करने वाले लाभार्थियों की संख्या 4 लाख पहुंच गई। इस कार्यक्रम की शुरुआत से अप्रैल 2020 तक कुल 1.95 लाख कानूनी सलाह मुहैया कराए गए, जबकि मौजूदा वित्त वर्ष के पहले 7 महीनों में 2.05 लाख सलाह मुहैया कराए गए हैं। 'डिजिटल इंडिया दृष्टिपत्र' को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार का न्याय विभाग नए और स्थानीय डिजिटल प्लेटफॉर्म का सहारा ले रहा है, ताकि सभी लोगों के लिए न्याय वास्तविकता बन सके। इसी मकसद को ध्यान में रखते हुए 2017 में टेली-कानून कार्यक्रम की शुरुआत की गई थी, ताकि मुकदमेबाजी से पहले के चरण में समस्याओं का निपटारा हो सके। आप https://tele-law.in/ पर जाकर मुफ्त/मामूली शुल्क में सेवाओं का लाभ उठा सकते हैं।

संपादकीय

लोककल्याणकारी राज्य

''अगर आप मुझसे जानना चाहते हैं कि आदर्श समाज कैसा होगा, तो मेरा आदर्श समाज ऐसा होगा जो स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे पर आधारित होगा।'' – डॉ बी आर अंबेडकर

राज्य के नीति-निर्देशक तत्वों के माध्यम से भारत के संविधान में उन सामाजिक और आर्थिक स्थितियों का निर्धारण किया गया है जिनके अंतर्गत नागरिक अच्छा जीवन बिता सकते हैं। इन सिद्धांतों में लोककल्याणकारी राज्य के माध्यम से सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना की बात भी कही गयी है। संविधान के भाग-4 के अनुच्छेद 38, 41, 46 और 47 इस संदर्भ में विशेष रूप से प्रासंगिक हैं। अनुच्छेद 38 में राज्य को निर्देश दिया गया है कि वह जनता के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए सामाजिक व्यवस्था कायम करे। अनुच्छेद 41 का संबंध कुछ स्थितियों में काम के अधिकार, शिक्षा के अधिकार और लोक सहायता पाने के अधिकार से है। अनुच्छेद 46 का मकसद अनुसूचित जातियों और अन्य कमजोर तबकों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देना है। अनुच्छेद 47 में राज्य को यह जिम्मेदारी सौंपी गयी है कि वह जनता के पोषण और जीवन स्तर को ऊंचा उठाने का प्रयास करेगा और जनता के स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार लाएगा।

समता और समानता, दोनों ही अवधारणाओं का आधार निष्पक्षता है। लेकिन इसके लिए अपनाए जाने वाले साधनों में भिन्नताएं हो सकती हैं। अगर कोई व्यक्ति और एक बच्चा कुछ ऊंचाई पर रखी किसी चीज तक पहुंचने का प्रयास कर रहे हैं तो वयस्क व्यक्ति अपना हाथ बढ़ाकर ही उस चीज तक पहुंच सकता है, जबकि बच्चे को उस तक पहुंचने के लिए चौकी जैसी किसी ऊंची चीज की जरूरत होगी। समानता के अंतर्गत जिस बात पर जोर दिया जाता है वह है-सबको बराबरी का दर्जा देना, इसीलिए इस बात पर ध्यान नहीं दिया जाता कि बच्चा वयस्क व्यक्ति की बराबरी नहीं कर सकता। इसमें बच्चे को चौकी जैसी कोई चीज उपलब्ध नहीं करायी जाती। लेकिन समता का मतलब है बच्चे को भी बराबरी का मौका उपलब्ध कराने के लिए चौकी दी जाए ताकि वह भी वांछित ऊंचाई तक पहुंच सके। इसी तरह के समतामूलक समाज की परिकल्पना सर्वोदय और अंत्योदय में भी की गयी है जिसके अंतर्गत समाज के सबसे आखिरी छोर पर खड़े व्यक्ति तक पहुंचकर 'सबका विकास' करने की बात सोची गयी है।

देश में सीमांत या वंचित समुदायों का एक बड़ा वर्ग है जिसमें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोग, अन्य पिछड़े वर्गों के लोग, वरिष्ठ नागरिक, दिव्यांगजन, यायावर तथा अर्ध-यायावर लोग, ट्रांसजेंडर तथा भिखारियों का एक बड़ा वर्ग शामिल है। स्वतंत्रता के बाद से समाज और सरकारें उन्हें मुख्यधारा में लाने के लिए हर स्तर पर सतत प्रयास करते रहे हैं। समाज के इन्हीं लोगों को अधिकार संपन्न बनाने के लिए केन्द्रीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय गठित किया गया था।

लोगों के लिए सुविधाओं और अवसरों की कमी उन्हें अपनी पूरी क्षमता और दक्षता के विकास के उद्देश्य को हासिल करने से रोकती है। देश के सामने भुखमरी पूरी तरह समाप्त करने की चुनौती बनी हुई है। देश में आर्थिक सुधार पर अमल के बाद के पच्चीस से अधिक वर्षों में हमारी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण संरचनात्मक बदलाव किये गये हैं जिनसे हमारे नीति-निर्माताओं को अपना ध्यान कृषि से हटाकर विनिर्माण और सेवा क्षेत्र पर केन्द्रित करने को प्रेरित किया है। लेकिन आज एक बार फिर हमारी प्राथमिकता अपना ध्यान कृषि पर केन्द्रित करने और इसके माध्यम से खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराना, गरीबी कम करना तथा रोज़गार के अवसर पैदा करना हो गयी है।

समाज के कमज़ोर वर्गों, खास तौर पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करते हुए विधायी उपायों समेत अनेक प्रयास किये गये हैं और उन्हें सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से बचाने के लिए कदम उठाये गये हैं। चिकित्सा संबंधी कारणों को छोड़कर अन्य किसी भी कारण से स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाने वाली नशीली दवाओं और अन्य मादक पदार्थों के सेवन पर रोक लगाने के लिए कदम उठाये गये हैं। इस संबंध में नये और कई अन्य उपायों की आवश्यकता है। समूची व्यवस्था में ऐसा दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है जिससे विभिन्न समुदाय आपस में जुड़ें ताकि मादक पदार्थों के दुरुपयोग के बारे में उनकी सामूहिक जवाबी कार्रवाई सशक्त हो सके।

लोक नीति का दिव्यांगता के सामाजिक मॉडल की तरफ झुकाव, दिव्यांगता की दृष्टि से समावेशी समाजों के निर्माण की नई राह दिखलाता है। दिव्यांगता की दृष्टि से समावेशी समाज में ऐसी लोक नीतियां होंगी जो दिव्यांग लोगों के लिए उदार ही नहीं होंगी, बल्कि वे व्यक्ति-व्यक्ति में शारीरिक या अन्य अंतर भी सहर्ष स्वीकारेंगी। इतना ही नहीं, वे तमाम मानवीय विभिन्नताओं के प्रति हमेशा संवेदनशील भी रहेंगी।

पूरा विश्व आज कोविड-19 महामारी के अभूतपूर्व संकट के दौर से गुजर रहा है। ऐसे में यह और भी जरूरी हो जाता है कि शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक विकास के जरिए एक समावेशी समाज का निर्माण किया जाए जिसमें जरूरत पड़ने पर पुनर्वास की भी व्यवस्था की जाए। ■

सीमांत तथा वंचित वर्गों का कल्याण

थावरचंद गेहलोत

आज पूरा विश्व कोविड-19 महामारी के कारण कठिन दौर से गुजर रहा, जिसका असर भारत पर भी गंभीर रूप से पड़ा है और जिससे सर्वाधिक प्रभावित देश का सीमांत समूह हुआ है। इस कठिन समय में केंद्रीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा लगनपूर्वक कार्य कर अपनी सभी योजनाओं का लाभ सीमांत समूह तथा वंचित वर्गों को मिले, इसके लिए हर संभव प्रयास किए जा रहे हैं

सीमांत (मार्जिनलाइज़्ड) समूह व्यक्ति या वर्ग विशेष का वह समूह है, जो विभिन्न कारणों वश सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक तौर पर हाशिये पर होने के कारण समाज की मुख्य धारा से जुड़ने से वंचित रह जाता है। हमारे देश में भी ऐसे लोगों की बड़ी संख्या है, जिसमें मुख्यत: अनुसूचित जाति-जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, वृद्धजन, दिव्यांगजन, घुमंतू-अर्धघुमंतू, ट्रांसजेन्डर एवं भिक्षावृति में संलग्न समूह वर्ग की बड़ी संख्या आती है। आज़ादी के बाद से ही इस प्रकार की व्याप्त विषमता को दूर करने और इस वर्ग को मुख्य धारा से जोड़ने का हर स्तर पर प्रयास समाज और सरकार द्वारा किया जा रहा है। इसी को केंद्र में रखकर 'सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय' का गठन किया गया है।

मंत्रालय मुख्य रूप से दो विभागों में विभाजित है- 1) सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग 2) दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग।

सामाजिक न्याय और अधिकारिता विभाग

सामाजिक न्याय और अधिकारिता विभाग को मुख्यत: देश के सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े लक्ष्य समूह के सशक्तीकरण का कार्य सौंपा गया है। इसका उद्देश्य एक ऐसे समावेशी समाज का निर्माण करना है जिसमें लक्ष्य समूहों के सदस्य अपनी उन्नति और विकास के लिए उपयुक्त सहायता प्राप्त करके सक्रिय, सुरक्षित और गरिमामय जीवन व्यतीत कर सकें। इस प्रयास में, विभाग को शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक विकास तथा पुनर्वास के कार्यक्रमों के माध्यम से, जहां भी आवश्यक हो, अपने लक्ष्य समूह को सहायता प्रदान करने और इनका सशक्तीकरण करने का अधिदेश है। इस विभाग के लक्ष्य समूह हैं: (1) अनुसूचित जातियां, (2) अन्य पिछड़ा वर्ग, (3) वरिष्ठ नागरिक, (4) मद्यपान तथा नशीले पदार्थ दुरुपयोग के पीड़ित,

लेखक भारत सरकार के सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय में कैबिनेट मंत्री हैं।
ईमेल : officesjem@gmail.com

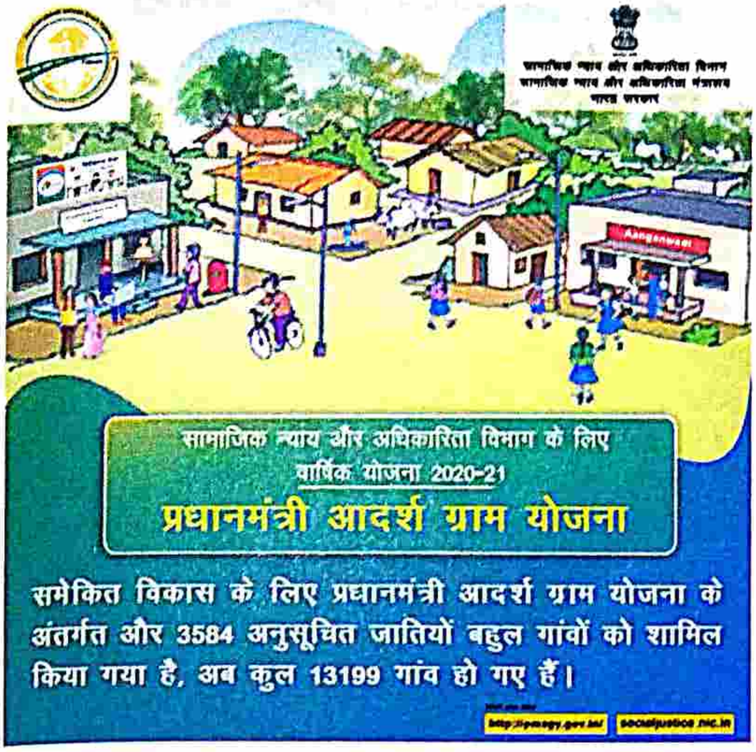

(5) ट्रांसजेंडर व्यक्ति, (6) भिखारी, (7) विमुक्त तथा घुमन्तू जनजातियां (डीएनटी), (8) आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग (ईबीसी)।

सामाजिक न्याय और अधिकारिता विभाग का मुख्य उद्देश्य है, अनुसूचित जातियों के शैक्षिक और आर्थिक विकास सहित उनका सामाजिक सशक्तीकरण, अन्य पिछड़ा वर्गों, विमुक्त, घुमन्तू और अर्ध-घुमन्तू जनजातियों के सामाजिक सशक्तीकरण के साथ-साथ शैक्षिक तथा आर्थिक विकास, वरिष्ठ नागरिकों को उनके भरण-पोषण, कल्याण, सुरक्षा, स्वास्थ्य की देखभाल और उपयोगी एवं स्वतंत्र जीवन-यापन के लिए सहायता, मद्यपान तथा नशीले पदार्थ (दवा) दुरुपयोग की रोकथाम और उपचार, ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के सामाजिक सशक्तीकरण के साथ-साथ शैक्षिक और आर्थिक विकास, आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों का शैक्षिक तथा आर्थिक सशक्तीकरण और भिखारियों का पुनर्वास।

दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग

दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग को दिव्यांगता के मुद्दों को प्रभावी ढंग से देखने, नीतिगत मामलों पर और अधिक ध्यान केन्द्रित करने और हितधारकों, संगठनों, राज्य सरकारों या संबंधित केन्द्रीय मंत्रालयों के बीच और अधिक समन्वय करने के लिए एक नोडल विभाग के तौर पर कार्य करने हेतु 12 मई, 2012 को, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय में से बनाया गया था। दिनांक 14 मई, 2016 की अधिसूचना के अनुसार, विभाग का दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग नाम से पुनः नामकरण किया गया है। दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग का मुख्य उद्देश्य है, एक ऐसे समावेशी समाज का निर्माण करना जिसमें उपयोगी, सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन जीने के लिए दिव्यांगजनों को उन्नति और विकास हेतु समान अवसर उपलब्ध हो। दिव्यांगजनों के सशक्तीकरण और विकास हेतु विधायन/नीतियों/कार्यक्रमों/योजनाओं के माध्यम से अपने दिव्यांगजन को सशक्त बनाना।

दोनों ही विभाग शैक्षणिक, आर्थिक व सामाजिक विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी), दिव्यांगजन जैसे समाज के लाभवंचित और आर्थिकविहीन वर्गों, वृद्धजनों और मद्यपान तथा नशीले पदार्थों के दुरुपयोग से पीड़ित आदि के सशक्तीकरण का लक्ष्य रखता है ताकि उनकी बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करते हुए उन्हें उपयोगी, सुरक्षित और सम्मानित जीवन का अधिकार दिया जा सके तथा उनकी उन्नति और विकास के लिए समान अवसर सुनिश्चित किया जा सके।

अनुसूचित जाति और अन्य पिछड़ा वर्ग का शैक्षणिक, आर्थिक और सामाजिक सशक्तीकरण, वरिष्ठ नागरिकों की देखभाल, कल्याण, सुरक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और उपयोगी तथा स्वतंत्र जीवन द्वारा उन्हें सहायता, साथ ही अन्य लाभवंचित और अधिकारहीन वर्गों के लिए पहले से चल रही योजनाओं को मजबूत किया गया। साथ ही कई नई योजनाओं की शुरुआत की गई है। और योजनाओं का लाभ अधिक से अधिक लोगों को मिले इसके लिए एक मजबूत कार्यपद्धति अपनाई गई है। अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़ा वर्गों के शैक्षणिक सशक्तीकरण के लिए मंत्रालय द्वारा विभिन्न प्रकार की छात्रवृत्ति योजनाओं का संचालन किया किया जाता है। अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति में 2014-15 में 1800 करोड़ रुपये से 2018-19 की अवधि के दौरान लगभग 3250 करोड़ रुपये की वृद्धि की गई है, इसमें कुल 60 लाख

अनुसूचित जाति और अन्य पिछड़ा वर्ग का शैक्षणिक, आर्थिक और सामाजिक सशक्तीकरण, वरिष्ठ नागरिकों की देखभाल, कल्याण, सुरक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और उपयोगी तथा स्वतंत्र जीवन द्वारा उन्हें सहायता, साथ ही अन्य लाभवंचित और अधिकारहीन वर्गों के लिए पहले से चल रही योजनाओं को मजबूत किया गया। साथ ही कई नई योजनाओं की शुरुआत की गई है।

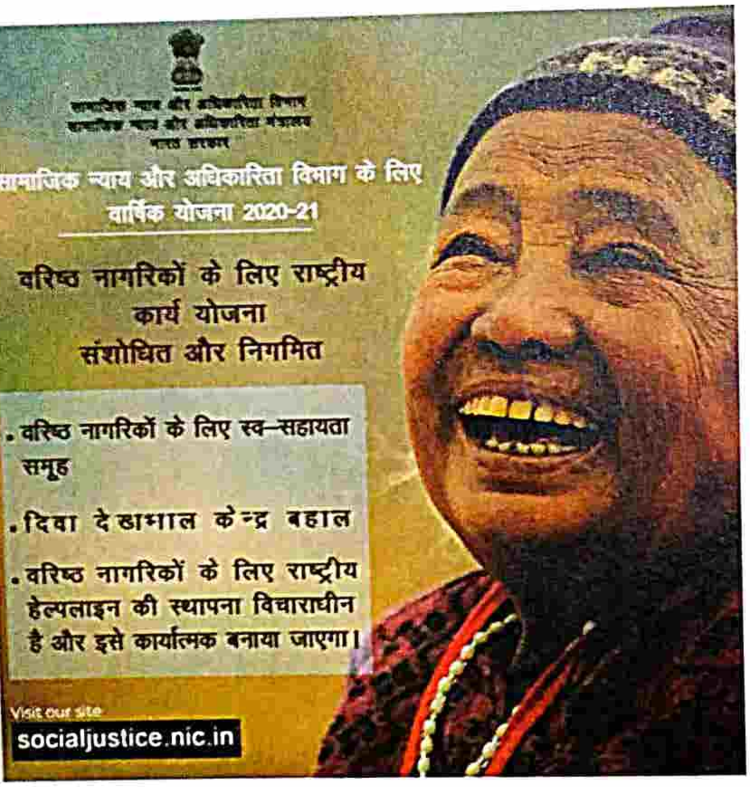

बच्चों को लाभ मिला है। इसी प्रकार 2019-20 के लिए अभी तक 2711 करोड़ रुपये की राशि राज्यों को दी जा चुकी है। साथ ही बेहतर पारदर्शिता और समय से राशि जारी करने को सुनिश्चित करने के लिए स्कीम को डी.बी.टी. मोड में ऑनलाइन कार्यान्वित किया जा रहा है।

कक्षा 9 और 10 में अध्ययनरत अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के लिए मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति की पात्रता को संशोधित कर वर्ष 2017 में 2 लाख रुपये प्रति वर्ष से बढ़ाकर 2.5 लाख रुपये प्रति वर्ष किया गया साथ में छात्रवृत्ति की दरों में भी 50 प्रतिशत की वृद्धि की गई। वर्ष 2019-20 में राज्य के प्रतिबद्ध उत्तरदायित्व विषय को समाप्त कर दिया गया और केंद्र तथा राज्य के मध्य 60:40 के अनुपात रखा गया। पूर्वोत्तर राज्यों के मामलों में यह शेयरिंग अनुपात 90:10 है। तदनुसार, वर्ष 2015-16 से 2019-20 के दौरान इस योजना पर वार्षिक रूप से व्यय किए गए 300 करोड़ रुपये औसत की तुलना में 2020-21 का बजट अनुमान 700 करोड़ रुपये रखा गया है।

अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के लिए उत्कृष्ट शिक्षा योजना के अंतर्गत चयनित 220 उत्कृष्ट संस्थाओं के प्रतिभावान पात्र एससी विद्यार्थियों को उनके अध्ययन हेतु फीस, रहने और खाने तथा कंप्यूटर/लैपटॉप और अन्य सहायक सामग्रियों के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है। व्यय और लाभार्थियों की संख्या जो 2009-14 में क्रमशः 78.11 करोड़ रुपये तथा 5716 थी, वह 2014-19 में दुगुनी होकर क्रमशः 164.39 करोड़ रुपये तथा 9544 हो गई। वर्ष 2018-19 में पात्रता के लिए वार्षिक पारिवारिक आय की उच्चतम सीमा को 4.5 लाख रुपये से बढ़ाकर 6 लाख रुपये कर दिया गया है।

शिक्षा क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के लिए कार्यरत स्वैच्छिक संगठनों को सहायता अनुदान संबंधी केंद्रीय क्षेत्र योजना का मुख्य उद्देश्य, सरकार के विकास संबंधी हस्तक्षेप तक पहुंच बढ़ाना और स्वैच्छिक संगठनों एवं अन्य संगठनों के प्रयासों के माध्यम से शिक्षा के क्षेत्र में सेवा रहित अनुसूचित जाति बहुल क्षेत्रों में व्याप्त कमियों को दूर करना है। सहायता अनुदान के रूप में वित्तीय सहायता, गैर-सरकारी संगठनों और अन्य संगठनों को परियोजनाओं का कार्यान्वयन करने के लिए प्रदान की जाती है।

एससी और ओबीसी छात्रों के लिए निःशुल्क कोचिंग योजना के तहत रोज़गार और उच्चतर शिक्षा, दोनों के लिए प्रतियोगिता परीक्षा हेतु स्कीम के अंतर्गत 2009-14 के दौरान कुल 13.10 करोड़ रुपये जारी किए गए जो 2014-19 की अवधि में बढ़कर 48.33 करोड़ हो गए। इसी अवधि में लाभार्थियों की संख्या 6126 से दुगुनी होकर 13473 हो गई।

शिक्षा क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के लिए कार्यरत स्वैच्छिक संगठनों को सहायता अनुदान संबंधी केंद्रीय क्षेत्र योजना का मुख्य उद्देश्य, सरकार के विकास संबंधी हस्तक्षेप तक पहुंच बढ़ाना और स्वैच्छिक संगठनों एवं अन्य संगठनों के प्रयासों के माध्यम से शिक्षा के क्षेत्र में सेवा रहित अनुसूचित जाति बहुल क्षेत्रों में व्याप्त कमियों को दूर करना है। सहायता अनुदान के रूप में वित्तीय सहायता, गैर-सरकारी संगठनों और अन्य संगठनों को परियोजनाओं का कार्यान्वयन करने के लिए प्रदान की जाती है। योजनाओं में प्रमुख संशोधन वेब समर्पित पोर्टल (ई-अनुदान) और अनुदानों के इलेक्ट्रॉनिक अंतरण के माध्यम से 2014 और 2018 में किया गया था। सहायता की मात्रा में 100 प्रतिशत की वृद्धि की गई, शिक्षा क्षेत्र पर ध्यान दिया गया नामतः आवासीय स्कूलों/गैर-आवासीय स्कूलों और प्राथमिक और माध्यमिक दोनों स्तर के विद्यार्थियों के लिए छात्रावास, शैक्षिक रूप से पिछड़े ब्लॉकों या 40 प्रतिशत एससी जनसंख्या वाले सेवा रहित ब्लॉकों या नीति आयोग द्वारा पहचानशुदा पिछड़े जिलों में नए स्कूल परियोजनाओं की स्थापना की गई है वर्ष 2009-10 से 2013-14 की अवधि के दौरान वित्तीय आवंटन 148 करोड़ रुपये था और लाभार्थियों की संख्या 134425 थी। वर्ष 2014-15 से 2018-19 की अवधि के दौरान वित्तीय आवंटन 244.72 करोड़ रुपये था और लाभार्थियों की संख्या 217407 हैं।

ओबीसी/ईबीसी और डीएनटी के लिए मैट्रिक-पूर्व एवं मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति योजना के अंतर्गत वर्ष 2014-19 के दौरान शैक्षिक स्थानों के संबंध में 6 करोड़ (लगभग) लाभार्थियों को कवर किया गया है। वर्ष 2020-21 के लिए बजट अनुमान 1700 करोड़ रुपये है। ओबीसी छात्रों के लिए राष्ट्रीय फेलोशिप योजना में वर्ष 2014-19 के दौरान शैक्षिक उत्थान के लिए 5200 विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति दी गई है अनुसूचित जातियों का सामाजिक सशक्तीकरण के लिए प्रधानमंत्री आदर्श ग्राम योजना 1000 बहुल गांवों के एकता विकास हेतु वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए वर्ष 2009-10 में शुरू की गई थी। मार्च 2015 में और 1500 गांवों को इसमें शामिल किया गया था। अब यह निर्णय लिया गया है इस योजना का कार्यान्वयन पैन-इंडिया (संपूर्ण भारत में) आधार पर किया जाए और लगभग सभी 27,000 एससी बहुल गांवों को कवर किया जाए। अक्टूबर 2018 से यह योजना 8296 गांवों में कार्यान्वित की जा रही है। प्रभावी योजना बनाने, निगरानी करने और कार्यान्वयन के लिए एक ऑन-लाइन प्रणाली स्थापित की गई है ताकि पहचानशुदा

संकेतकों के अंतरालों का पता लगाया जा सके, जिससे की अन्य योजनाओं के अभिसरण के माध्यम से ग्राम विकास योजना (विलेज डवलपमेंट प्लान-वीडीपी) बनाई जा सके और तत्संबंधी प्रगति की निगरानी की जा सके। फरवरी 2020 तक लगभग 9.5 लाख परिवारों का सर्वेक्षण किया जा चुका है और 36 लाख से अधिक लाभार्थियों की पहचान की जा चुकी है।

डॉ अंबेडकर चिकित्सा सहायता योजना के अंतर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति के आर्थिक रूप से कमजोर लोगों को गंभीर बीमारियों के उपचार के लिए 2009 में शुरू की गई, जिसका 2014 तक 272 लोगों को लाभ मिला था जबकि 2014 से 2020 में 1029 लोगों को लाभ मिला है।

अनुसूचित जातियों का आर्थिक सशक्तीकरण के लिए अनुसूचित जाति उप योजना के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता की योजना (एससीएसपी के लिए एससीए) का उद्देश्य अनुसूचित जाति बहुल्य गांवों में आय सृजन योजना, कौशल विकास कार्यक्रमों तथा अवसंरचना विकास के माध्यम से अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों की आय में वृद्धि करना है। 2009 से 2014 तक की अवधि के दौरान, वार्षिक रूप से औसत खर्च किए गए। 701 करोड़ रुपये की तुलना में 2014-2020 के दौरान वार्षिक रूप से औसत 827.5 करोड़ रुपये खर्च किए गए हैं। तद्नुसार, 2020-21 के लिए बजट अनुमान में 1200 करोड़ रुपये तक की वृद्धि भी की गई है।

अनुसूचित जातियों के उद्यमियों को बढ़ावा देने और उन्हें रियायती वित्त प्रदान करने के लिए 200 करोड़ रुपये की आरंभिक पूंजी से वैंचर कैपिटल योजना की शुरुआत दिसम्बर 2015 में की गई थी। इस योजना के तहत फरवरी 2020 तक 107 अनुसूचित जाति उद्यमियों को लगभग 400 करोड़ की निधि स्वीकृति की जा चुकी है। इसी प्रकार ओबीसी के आर्थिक विकास के लिए 2017-18 में आरंभ हुई वेंचर कैपिटल फंड योजना का उद्देश्य पिछड़े वर्गों के रोज़गार सृजन के लिए उन्हें रियायती वित्त प्रदान करने के माध्यम से लक्षित लाभार्थियों में से उद्यमियों को बढ़ावा देना है। अभी हाल में ही इन वर्गों में अधिक से अधिक उद्यमिता को बढ़ाने के लिये 2 नई योजनाएं वंचित इकाई समूह और वर्गों की आर्थिक सहायता- वीआईएसवीएएस और अंबेडकर सोशल इनोवेशन एंड इन्क्यूबेशन मिशन- एएसआईआईएम शुरू की गई है। इन विशेष योजनाओं के आलावा मंत्रालय द्वारा विभिन्न वित्त विकास निगमों के माध्यम से विभिन्न रोज़गारों के लिए रियायती दरों पर वित्त के अलावा विभिन्न प्रकार के कौशल विकास कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। वर्ष 2014 से लेकर मई 2020 तक मंत्रालय के अंतर्गत वित्त विकास निगमों के माध्यम से एससी, ओबीसी, सफाई कर्मी के लिये 5778.79 करोड़ रुपये की राशि के 15,17,754 लोगों को स्वरोज़गार ऋण स्वीकृत करके उनको रोज़गार से जोड़ने की महत्वपूर्ण कार्यवाही हुई है। इसी प्रकार इन्हीं विकास निगमों के माध्यम से 2014 से मई 2020 तक 243 करोड़ रुपये खर्च कर लगभग 17,67,106 लोगों को विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक प्रशिक्षण भी दिये गये हैं।

वरिष्ठ नागरिक

सामाजिक न्याय और अधिकारिता विभाग वरिष्ठ नागरिकों की सुरक्षा, देखभाल और उनके कल्याण तथा स्वास्थ्य के लिए प्रतिबद्ध है। हमारा उद्देश्य एक ऐसी पारिस्थितिकी प्रणाली सृजित करना है जहां सभी भारतवासी आनंदपूर्वक तथा गरिमापूर्ण जीवनयापन कर सकें और जिसमें वरिष्ठ नागरिकों की मौजूदा तथा उभरती आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ठोस और सह-क्रियात्मक कार्रवाई की जा सके। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में वरिष्ठ नागरिकों की संख्या लगभग 10.46 करोड़ है। शोध से यह पता चलता है कि सन् 2030 तक भारत की जनसंख्या के 12 प्रतिशत लोग 60 वर्ष की आयु से अधिक हो जाएंगे।

जबकि वर्ष 2009-14 की अवधि के दौरान केवल एक योजना 'एकीकृत वरिष्ठ नागरिक कार्यक्रम' चलाई जा रही थी, लेकिन वर्ष 2014-15 से वरिष्ठ नागरिकों के कल्याण के लिए एक कार्यनीति तैयार करते हुए उसमें निम्नलिखित मुख्य सुधार किए गए हैं-

1. वेब-समर्थित पोर्टल 'ई-अनुदान' के माध्यम से वृद्धाश्रमों का कार्यान्वयन और अनुदान राशि का इलेक्ट्रॉनिकी ट्रांसफर।
2. अनुदान राशि की प्रमात्रा में बृहत वृद्धि।
3. वरिष्ठ नागरिकों के लिए नई और अभिनव कल्याण योजनाओं के लिए वरिष्ठ नागरिक कल्याण निधि की स्थापना।
4. राष्ट्रीय वयोश्री योजना (आरवीवाई) का शुभारंभ, जिसका उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले उन वरिष्ठ नागरिकों जो आयु से संबंधित दिव्यांगता/निशक्तता से पीड़ित हैं, को सहायक उपकरण और जीवन सहायक यंत्र निःशुल्क प्रदान करना है।

अभी तक इस योजना के तहत लाखों वरिष्ठ जनों को विभिन्न प्रकार के सहायक उपकरण दिए गए हैं। इसी वर्ष फ़रवरी 2020 को प्रयागराज में एक विशाल शिविर में माननीय प्रधानमंत्री की उपस्थिति में हज़ारों वरिष्ठ जनों को सहायक उपकरण वितरित किए गए। एक नई स्कीम शुरू की गई जिसमें वरिष्ठ नागरिकों के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना की छत्रछाया के अंतर्गत सभी संभव सकारात्मक कार्रवाई की जा सके। माता-पिता और वरिष्ठ नागरिक भरण-पोषण और कल्याण (विधेयक), 2019 में किए गए मुख्य संशोधन लोक सभा के विचाराधीन है।

नशीले पदार्थ की रोकथाम

नशीली दवा की मांग में कटौती करने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना के तहत मंत्रालय ने वर्ष 2018 के दौरान भारत में नशीले

पदार्थों के उपयोग के बारे में पहला राष्ट्रीय सर्वेक्षण करवाया है। सरकार के पास अब नशीले पदार्थों का उपयोग करने वाले व्यक्तियों के बारे में राज्यवार आंकड़े उपलब्ध हैं, जिनका उपयोग नशीली दवा की मांग में कटौती करने के लिए 'हस्तक्षेप कार्यक्रमों' को आयोजित करने के लिए किया जाएगा। वर्ष 2018-2025 की अवधि के लिए नशीली दवा की मांग में कटौती करने हेतु एक राष्ट्रीय कार्य योजना तैयार की गई है जिसका उद्देश्य प्रभावित व्यक्तियों और उनके परिवारों के निवारण, उपचार और पुनर्वास के लिए एक बहुआयामी कार्यनीति के माध्यम से नशीली दवा के दुरुपयोग के प्रतिकूल परिणामों में कटौती करना है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत वर्ष 2018-19 से 219.12 करोड़ रुपये की राशि जारी की गई है। वर्ष 2020-21 के लिए एनएपीडीडीआर के अंतर्गत 260 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की गई है। कोविड-19 महामारी के फैलाव के कारण देश लगभग तीन महीने पूर्णरूप से बंद रहा, जिससे नशीले पदार्थों का सेवन करने वालों में विभिन्न प्रकार की समस्या उत्पन्न हुई हैं जिस कारण मंत्रालय की नशामुक्ति हेल्पलाइन पर पहले की तुलना में भी कई गुना अधिक कॉल आयी हैं और इनके निवारण के लिए मंत्रालय ने देश भर में फैले नशा मुक्ति केंद्रों पर विशेषज्ञों द्वारा प्रभावितों/पीड़ितों की काउंसलिंग की जा रही है।

भिक्षावृत्ति में लगे व्यक्तियों का पुनर्वास

भिक्षावृत्ति के कार्य में संलग्न व्यक्तियों के पुनर्वास हेतु वर्ष 2017-20 के दौरान सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय ने राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त तथा विकास निगम (एनबीसीएफडीसी) और राष्ट्रीय समाज रक्षा संस्थान (एनआईएसडी) को भिक्षावृत्ति में संलग्न व्यक्तियों के लिए कौशल विकास कार्यक्रमों को संचालित करने हेतु 3.2 करोड़ रुपये की राशि जारी की है। वर्ष 2020-21 के लिए भिखारियों के व्यापक पुनर्वास के लिए एक नई योजना के अंतर्गत 100 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की गई है। वैश्विक महाकारी कोविड-19 के प्रभाव से बचने के लिए मंत्रालय में विशेष तौर पर सौ करोड़ रुपये की राशि देश के विभिन्न ज़िलों को आवंटित की है।

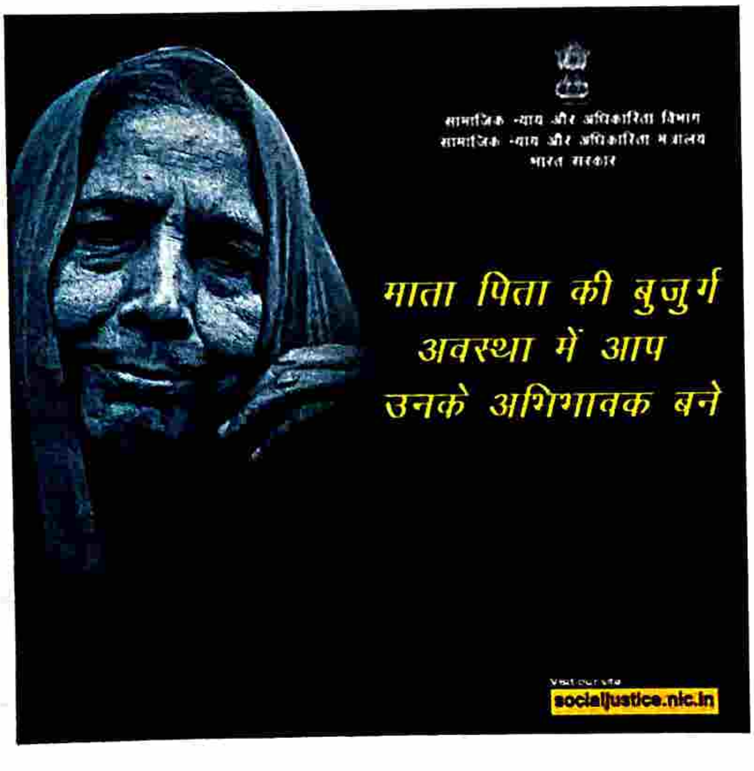

जिससे भिक्षावृत्ति में लिप्त लोगों को भोजन सामग्री या अन्य ज़रूरत की चीज़ें उपलब्ध कराई जा सके।

ट्रांसजेंडर का कल्याण

ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के कल्याण एवं सशक्तीकरण के लिए ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) विधेयक, 2019 लोक सभा और राज्य सभा द्वारा पारित कर कानून बनाया गया है। मंत्रालय इस अधिनियम के अंतर्गत नियम तैयार करने और ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लिए आवास, स्वास्थ्य शिविर आयोजित करना और कौशल विकास जैसी कल्याण योजनाओं को तैयार करने का कार्य लगभग कर चुकी है। अभी तक लगभग 355 ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को लाभान्वित करते हुए 12 कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जा चुके हैं। लगभग 265 ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के लाभ के लिए स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन किया गया है। वर्ष 2020-21 के लिए ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के कल्याण के लिए 10 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की गई है।

विमुक्त, घुमंतू और अर्ध-घुमंतू समुदायों के लिए विकास और कल्याण बोर्ड (डीडब्ल्यूबीडीएनसी) का गठन किया गया है जिसका कार्य है- डीएनटी के लिए कल्याण और विकास संबंधी कार्यक्रम तैयार करना और उन्हें कार्यान्वित करना, डीएनटी के संदर्भ में भारत सरकार और राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों के स्कीमों की निगरानी करना और उनमें हो रही प्रगति का मूल्यांकन करना, डीएनटी समुदायों की शिकायतों का निवारण करना और उनकी अपेक्षाओं को पूरा करना। भारतीय मानविकीय सर्वेक्षण विभाग उन 62 जनजातियों/समुदायों का जनसांख्यिकीय अध्ययन कर रहा है जिन्हें अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों की केंद्रीय सूची में शामिल नहीं किया गया है।

दिव्यांगजन का सशक्तीकरण

हमारा यह मानना है कि दिव्यांगजन, मानव संसाधन का एक अभिन्न अंग है। उनके लिए समावेशी समाज तथा उनके सशक्तीकरण हेतु सरकार निरन्तर प्रयास कर रही है। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने पर्सन्स विद डिसएबिलिटी को 'दिव्यांगजन' संबोधित करते हुए, उनको एक नई पहचान दी जो कि आज उनके गौरवमय जीवन का प्रतीक बन गया है। दिव्यांगजनों के सशक्तीकरण के लिये सरकार ने विभिन्न प्रकार की नई योजनाओं की शुरुआत की है तथा कुछ योजनाओं में नीतिगत बदलाव भी लाए गये हैं ताकि इन योजनाओं का सही प्रकार से अपने लक्ष्य के अनुरूप कार्यान्वियन किया जा सके। दिव्यांगजनों के सशक्तीकरण हेतु हमारी सरकार बजट प्रावधानों में निरंतर बढ़ोतरी कर रही है। 2013-14 में 560 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया था, जबकि इस वितीय वर्ष में 1204.90 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है, जो कि 2013-14 के तुलना में दो गुणा से भी अधिक है।

वर्ष 2020-21 में 1325.39 करोड़ रुपये के बजट का प्रावधान किया गया है जो कि पिछले वर्ष की तुलना में 10 प्रतिशत अधिक है। हमारी सरकार ने 'दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम-2016' पारित किया है जो कि दिव्यांगजनों के सशक्तीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। पुराना अधिनियम एक कल्याण आधारित अधिनियम था जबकि 2016 का अधिनियम 'अधिकार' आधारित अधिनियम है। यह दिव्यांगता के अधिकार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव पर रोक लगाता है। दिव्यांगता की 7 श्रेणियों को बढ़ाकर 21 कर दिया गया है।

नियुक्ति में आरक्षण 3 प्रतिशत से बढ़ाकर 4 प्रतिशत और उच्च शिक्षा में आरक्षण 3 प्रतिशत से बढ़ाकर 5 प्रतिशत का प्रावधान किया गया है। इस अधिनियम में दिव्यांगजनों के लिये एक सुगम्य वातावरण तैयार करने और उनकी शिक्षा, कौशल विकास, स्वास्थ, पुनर्वास एवं खेल की दिशा में प्रावधान किये गए हैं।

दिव्यांगजनों का सशक्तीकरण संविधान के सूची 2 के अनुसार मूलतः राज्य सरकार की विषय वस्तु है। परन्तु भारत सरकार अपनी योजनाओं के माध्यम से राज्य सरकार के प्रयासों को सहायता प्रदान कर रही है। इस विभाग की समस्त योजनाएं केन्द्रीय क्षेत्र की योजनाएं हैं। अतः इन योजनाओं का क्रियान्वयन राज्य सरकारों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों के सहयोग से किया जाता है और उनके द्वारा समय पर मांग और उपयोगिता प्रमाण पत्र मिलने पर निर्भर करता है।

केंद्र सरकार ने 2015 में 'सुगम्य भारत अभियान' प्रारंभ किया था। इसके अन्तर्गत 1152 राज्य सरकार के भवनों हेतु 443.63 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं तथा 998 केन्द्र सरकारी भवनों में रेट्रोफिटिंग की गई है। 35 अन्तरराष्ट्रीय हवाई अड्डों तथा 69 में से 69 घरेलू हवाई अड्डों में सुगम्य वातावरण बनाया गया है। सभी 709 रेलवे स्टेशनों में 7 अल्पकालिक, 603 रेलवे स्टेशनों में दीर्घकालिक सुविधाएं प्रदान की जा चुकी हैं। 5244 बसें सुगम्य बनाई गई हैं।

एडिप योजनाः क) 2014-15 से मई 2020 तक 9194 शिविरों का आयोजन किया गया है जिसमें 16.43 लाख दिव्यांगजनों को लाभ पहुंचा है और 968.43 करोड़ रुपये मूल्य के सहायक यंत्र और उपकरण वितरित किए गए हैं। ख) कॉकलियर इम्पलान्ट के लिए 186 अस्पताल सूचीबद्ध किए गए तथा 2555 सर्जरियां की गईं। ग) 18040 मोटराइज्ड ट्राईसाइकिलें वितरित की गई हैं। घ) 10 गिनीज वर्ल्ड रिकार्ड बनाये गए हैं।

केंद्र सरकार ने 2015 में **'सुगम्य भारत अभियान'** प्रारंभ किया था। इसके अन्तर्गत 1152 राज्य सरकार के भवनों हेतु 443.63 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं तथा 998 केन्द्र सरकारी भवनों में रेट्रोफिटिंग की गई है। 35 अन्तरराष्ट्रीय हवाई अड्डों तथा 69 में से 69 घरेलू हवाई अड्डों में सुगम्य वातावरण बनाया गया है। सभी 709 रेलवे स्टेशनों में 7 अल्पकालिक, 603 रेलवे स्टेशनों में दीर्घकालिक सुविधायें प्रदान की जा चुकी हैं। 5244 बसें सुगम्य बनाई गई हैं। 368 राज्य सरकारों की वेबसाइटें सुगम्य बन गई हैं तथा 95 केन्द्र सरकार की वेबसाइटें भी सुगम्य बनाई जा चुकी हैं।

दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए छात्रवृति योजनाः यह योजना 2014-15 से पूर्ण रूप से लागू हुई है। इससे पहले केवल नेशनल फेलोशिप योजना थी जो कि एमफिल और पीएचडी दिव्यांग विद्यार्थियों के लिये ही उपलब्ध थी। अब 6 घटक योजनाएं प्री-मैट्रिक, पोस्ट-मैट्रिक, टॉप-क्लास, नेशनल ऑवरसिज, नेशनल फेलोशिप तथा फ्री कोचिंग लागू की गई हैं। पिछले पांच वर्षों में एवं वर्तमान वर्ष में 88143 दिव्यांग विद्यार्थियों को 266.91 करोड़ रुपये की छात्रवृतियां प्रदान की गई हैं। इस राष्ट्रीय कार्य योजना से पहले दिव्यांगजनों का कौशल विकास प्रशिक्षण मामूली रूप से होता था। 2013-14 में केवल 570 दिव्यांगजनों को कौशल विकास प्रशिक्षण दिया गया था। जबकि 2014 से मई 2020 तक 101206 दिव्यांगजनों को विभिन्न प्रकार कौशल विकास के लिए प्रशिक्षण दिया जा चुका है।

विशिष्ट दिव्यांगता पहचान पत्र (यूडीआईडी) परियोजनाः यह हमारी सरकार की पहल है जिसके तहत हम दिव्यांगजनों का राष्ट्रीय डेटाबेस बना रहे है जिसमें हमने सभी दिव्यांगों को एक विशिष्ट पहचान देने का लक्ष्य रखा है। इसे सभी राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में यह योजना लागू की जा चुकी है और मई 2020 तक 707 जिलों में 48.97 लाख यूडीआईडी कार्ड जारी किये जा चुके हैं।

राष्ट्रीय संस्थान और समेकित क्षेत्रीय केन्द्रः 2014 से पहले केवल 7 राष्ट्रीय संस्थान एवं 8 सीआरसी थे। वर्तमान समय में कुल नौ राष्ट्रीय संस्थान एवं 20 समेकित क्षेत्रीय केन्द्र हैं।

भारतीय सांकेतिक भाषा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्रः यह एक नया राष्ट्रीय संस्थान है जो हमारी सरकार ने वर्ष 2015 में स्थापित किया है। संस्थान ने 6000 शब्दों और अभिव्यक्तियों वाला शब्दकोश विकसित किया है।

राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य पुनर्वास संस्थानः यह संस्थान भी हमारी सरकार ने सीहोर, मध्य प्रदेश में स्थापित करने का निर्णय लिया है। सीपीडब्ल्यूडी द्वारा भवन निर्माण कार्य जारी है। वर्तमान में अस्थायी भवन में कार्य शुरू कर दिया गया है। इस परियोजना की कुल लागत 179 करोड़ रुपये है।

दिव्यांगता खेल केन्द्रः यह केन्द्र स्थापित करना भी हमारे सरकार की पहल है। देश के पांचों क्षेत्रों में दिव्यांगता खेल केन्द्र शुरू करने का प्रस्ताव है। वर्तमान वित्त आयोग के कार्यकाल के दौरान ग्वालियर एवं शिलांग में केन्द्र स्थापना की सहमति प्राप्त की जा चुकी है। ग्वालियर में 170.99 करोड़ रुपये की लागत के केन्द्र का कार्य पिछले महीने से शुरू भी हो चुका है। इस केन्द्र द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 300 दिव्यांग खिलाड़ियों को प्रशिक्षण दिया जायेगा। शेष तीन केन्द्र 15वें वित्त आयोग के कार्यकाल के दौरान प्रस्तावित किये जाएंगे।

आर्टिफिशियल लिम्ब्स मैनुफैक्चरिंग कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया (एलिम्को) द्वारा इंग्लैंड के मोटिवेशनल ट्रस्ट के साथ आधुनिक व्हील चेयर के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किया गया है। ऑटोबोक की मशीनें स्थापित की गई है एवं इन्होंने उत्पादन शुरू कर दिया है। एलिम्को की नई उत्पादन इकाई उज्जैन में स्थापित की गई है। फरीदाबाद में स्टेट ऑफ आर्ट लिम्ब फिटिंग सेन्टर स्थापित किया गया है। हमारी सरकार द्वारा 338.04 करोड़ रुपये की लागत से इस कॉर्पोरेशन का आधुनिकीकरण किया जा रहा है ताकि दिव्यांगजनों को आधुनिक उपकरणों का लाभ मिल सके। राष्ट्रीय संस्थानों तथा सात समेकित क्षेत्रीय केन्द्रों में इसके लिये व्यवस्था की जा रही है।

आज पूरा विश्व कोविड-19 महामारी के कारण कठिन दौर से गुजर रहा, जिसका असर भारत पर भी गंभीर रूप से पड़ा है और जिससे सर्वाधिक प्रभावित देश का सीमांत समूह हुआ है। इस कठिन समय में केंद्रीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा लगनपूर्वक कार्य कर अपनी सभी योजनाओं का लाभ सीमांत समूह तथा वंचित वर्गों को मिले, इसके लिए हर संभव प्रयास किए जा रहे हैं। ■

कार्यस्थल और घर पर समानता

रेखा शर्मा

महिलाओं और पुरुषों के बीच समानता लाने और महिलाओं के साथ हिंसा समाप्त कराने की दिशा में हमने काफी लंबा रास्ता तय किया है। महिलाएं अपनी रोज़मर्रा की जिंदगी में कई किरदार निभाती हैं और इन सभी भूमिकाओं से जुड़े अधिकार उन्हें मालूम होने चाहिए ताकि जब उनके अधिकारों का हनन हो तो वे जानती हों कि किसका दरवाज़ा खटखटाना है।

दुनियाभर में महिलाएं यौन, भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक, विभिन्न स्तरों पर हिंसा का शिकार होती हैं और ऐसी उत्पीड़ित महिलाएं समाज के हर वर्ग - अमीर हो या गरीब और हर आयु वर्ग - बूढ़ा या युवा हर जगह मिलती हैं। कोविड-19 महामारी ने ऐसी महिलाओं के लिए खतरा और बढ़ा दिया है जो महामारी से पहले से ही नाज़ुक स्थितियों में जी रही थीं। विश्व के विभिन्न कोनों से मिली रिपोर्टों के अनुसार इस महामारी के दौरान महिलाओं के साथ हिंसा में वृद्धि हुई है जिसने उनकी दुर्दशा को और बढ़ा दिया है।

पिछले दशकों के दौरान घरों के अंदर और बाहर महिलाओं के प्रति व्यवहार में काफी बदलाव आया है लेकिन समाज की पुरुष प्रधान अवधारणाओं और दमनकारी सोच अब भी महिलाओं और पुरुषों (जेंडर) के बीच समानता के रास्ते में बड़ा रोड़ा है। अमरीका की सुप्रीम कोर्ट की प्रसिद्ध जज न्यायमूर्ति रूथ बेदर गिंसबर्ग ने जेंडर समानता को बेहतरीन शब्दों में परिभाषित करने की कोशिश की है। उन्होंने कहा था, "मैं महिला होने के नाते अपने लिए कोई अनुग्रह नहीं चाहती। हमारे पुरुष वर्ग से बस इतना चाहती हूं कि वे हमें पैरों की जूती समझना बंद करें।" दुनियाभर की महिलाओं के पास बांटने के लिए अपनी - उत्पीड़न की, पीड़ा की, कष्ट की और सबसे महत्वपूर्ण असमानता की दास्तां है।

महिलाओं को घरों और अपने कार्यस्थलों पर भी असमानता का शिकार होना पड़ता है। महिलाओं ने पुरुष प्रधान विश्व में ऊंचा

लेखिका राष्ट्रीय महिला आयोग की अध्यक्ष हैं। ईमेल: chairperson-ncw@nic.in

मुकाम हासिल किया है लेकिन उनके सामने कई चुनौतियां भी रहती हैं। बढ़ती संख्या में महिलाओं के कार्यस्थल में प्रवेश करने से कार्यस्थल पर उनके साथ अलग-अलग ढंग से यौन उत्पीड़न होने लगा है। महामारी ने हमें दिखाया है कि कार्यस्थल की परिभाषा बदलने के साथ व्यावसायिक स्थलों पर महिलाओं के साथ उत्पीड़न में भी बदलाव आया है। कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न, महिलाओं को न केवल मानसिक यातना देता है बल्कि यह उनके काम करने के अधिकार और गरिमापूर्ण जीवन जीने के अधिकार में भी बाधक होता है। कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न न केवल महिलाओं की सुरक्षा बल्कि अर्थव्यवस्था के लिए भी खतरा है क्योंकि यह महिलाओं को नौकरियां करने के प्रति हतोत्साहित करता है और उन्हें अपने लिए उपलब्ध अवसरों का लाभ उठाने से भी रोकता है। कार्यस्थल पर उत्पीड़न और उचित शिकायत निवारण व्यवस्था के अभाव से महिलाओं के लिए असुरक्षित और भययुक्त वातावरण बनता है।

महामारी के दौरान कार्य और जीवन शैली में आए अनेक बदलावों में एक प्रमुख बदलाव है **'वर्क फ्रॉम होम'** (घर से काम) का, जो काम करने की एक नई व्यवस्था बन रही है और इसीलिए कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ यौन उत्पीड़न की समस्या के साथ-साथ साइबर कार्यस्थल उत्पीड़न से निपटने पर भी ध्यान दिया जाना अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। राष्ट्रीय महिला आयोग ने अपने अधिकार क्षेत्र में संविधान के मौजूदा प्रावधानों और महिलाओं को प्रभावित करने वाले अन्य कानूनों की समीक्षा की है और तत्पश्चात् निवारक वैधानिक उपाय सुझाने के लिए संशोधनों की सिफारिश की है ताकि आवश्यक बदलाव किए जा सकें। कार्यस्थल पर महिलाओं की दशा को देखते हुए आयोग ने कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ यौन उत्पीड़न (रोकथाम, प्रतिबंध, निवारण) अधिनियम की समीक्षा की तो आयोग ने पाया की कई संस्थानों ने आंतरिक शिकायत समिति के गठन से संबंधित निर्देशों का पालन नहीं किया है। आयोग ने यह भी माना कि जेंडर आधारित साइबर अपराधों को शामिल करने के लिए कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की परिभाषा के विस्तार की जरूरत है।

जाने चाहिए, जिनसे उसे फिर से उत्पीड़ित होने का एहसास हो। हमारी पुलिस व्यवस्था हमारे समाज का प्रतिबिंब है।

पुलिस को महिलाओं की शिकायतों के प्रति अधिक संवेदनशील बनाने के उद्देश्य से आयोग पुलिस कर्मियों के लिए देश भर में एक दिन की जेंडर जागरूकता कार्यशाला आयोजित कर रहा है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य पुलिस कर्मियों के व्यवहार में बदलाव लाना है ताकि वे जेंडर आधारित अपराधों के पीड़ितों और आमतौर पर महिलाओं के साथ करुणा के साथ और पूर्वाग्रह से मुक्त होकर कार्रवाई कर सकें।

महिलाएं अपनी रोज़मर्रा की जिंदगी में कई किरदार निभाती हैं और इन सभी भूमिकाओं से जुड़े अधिकार उन्हें मालूम होने चाहिए ताकि जब उनके अधिकारों का उल्लंघन हो तो उन्हें पता हो कि किसका दरवाज़ा खटखटाना है। महिला सशक्तीकरण का सबसे बेहतर तरीका है कि उन्हें उनके कानूनी अधिकारों के बारे में जागरूक किया जाए ताकि वे खुद पथप्रदर्शक बन सकें और ऐसा करने का सर्वश्रेष्ठ उपाय महिलाओं को उनकी सुरक्षा के लिए उपलब्ध कानूनी प्रावधानों के बारे में शिक्षित करना है। कानूनी रूप से जागरूक होने से महिलाओं को गरिमापूर्ण ढंग से जीवन जीने का अवसर मिलता है। महिलाओं की वर्तमान आवादी गरीबी, निरक्षरता और कानून की अज्ञानता से ग्रस्त है जिसके कारण महिलाओं के बड़े वर्ग को अन्याय और अपने अधिकारों का उल्लंघन सहना पड़ता है। आयोग का अपने

परिवार समाज की सबसे छोटी इकाई होती है और हिंसा मुक्त घर, हिंसा मुक्त समाज की कुंजी है। महिलाओं की सुरक्षा, आयोग की सबसे प्रमुख गतिविधियों में से एक है और कोरोना वायरस के कारण लागू राष्ट्रव्यापी लॉकडाउन के दौरान आयोग ने घरेलू हिंसा की घटनाओं की सूचना देने के लिए व्हाट्सएप पर आपात हेल्पलाइन नंबर 7217735372 जारी किया था। आयोग टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज़ (टीआईएसएस) के साथ मिलकर महिलाओं को सशक्त करने और हिंसा की शिकार महिलाओं की मदद के लिए एक परियोजना चला रहा है। यह परियोजना सात राज्यों- बिहार, असम, मेघालय, पंजाब, मध्य प्रदेश, ओडिशा और तमिलनाडु में चल रही है जिसका उद्देश्य घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं के समर्थन तंत्र को बढ़ावा देना और दंड न्याय प्रणाली के भीतर एक व्यवस्थित शिकायत निवारण तंत्र स्थापित है। इस परियोजना के अंतर्गत सभी जिला मुख्यालयों में पीड़ित महिलाओं के लिए मनोचिकित्सा और विधिक सेवाएं देने हेतु प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ताओं की तैनाती की जाती है।

महिलाएं अधिक सहजता से अपने साथ होने वाली हिंसा की जानकारी दे सकें इसके लिए सबसे पहले पुलिस की सोच को बदलना होगा। हमें यह हमेशा ध्यान में रखना होगा कि पुलिस भी उसी पुरुष प्रधान समाज का अंग है और महिलाएं अक्सर थाने तक जाने का साहस नहीं जुटा पाती हैं। अगर कोई महिला थाने तक जाने का हौसला कर ले तो उससे ऐसे असुविधाजनक सवाल नहीं पूछे

महिला सशक्तीकरण का सबसे बेहतर तरीका है कि उन्हें उनके कानूनी अधिकारों के बारे में जागरूक किया जाए ताकि वे खुद पथप्रदर्शक बन सकें और ऐसा करने का सर्वश्रेष्ठ उपाय महिलाओं को उनकी सुरक्षा के लिए उपलब्ध कानूनी प्रावधानों के बारे में शिक्षित करना है। कानूनी रूप से जागरूक होने से महिलाओं को गरिमापूर्ण ढंग से जीवन जीने का अवसर मिलता है।

महिलाओं के खिलाफ हिंसा की रोकथाम

कार्यक्रम के जरिए उद्देश्य है कि सबसे गरीब महिला तक न्याय पहुंचे। राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण और राष्ट्रीय महिला आयोग के संयुक्त कार्यक्रम के अंतर्गत विशेष रूप से समाज के निचले वर्ग से जुड़ी महिलाओं को मूलभूत कानूनी अधिकारों और महिलाओं से जुड़े विभिन्न कानूनों में उपलब्ध उपायों के बारे में व्यावहारिक ज्ञान दिया जाता है। इस प्रकार उन्हें जीवन की वास्तविक स्थितियों में आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार किया जाता है। यह कार्यक्रम शिकायत निपटान हेतु उपलब्ध न्याय व्यवस्था के विभिन्न तंत्रों के बारे में महिलाओं को जागरूक करता है। यह कार्यक्रम, महिलाओं को, शिकायतों के निवारण के लिए उपलब्ध विभिन्न माध्यमों- पुलिस, कार्यपालिका और न्यायपालिका तक पहुंचने और उनका लाभ उठाने के बारे में जानकारी देता है। यह महिलाओं और लड़कियों को, भारतीय दंड संहिता, 1860; दहेज प्रतिबंध अधिनियम, 1961; महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा पर प्रतिबंध अधिनियम, 2005 आदि सहित विभिन्न कानूनों के तहत उल्लिखित उनके अधिकारों के बारे में अवगत कराता है।

महिलाओं और पुरुषों के बीच समानता सुनिश्चित करने में युवा पीढ़ी की बहुत बड़ी भूमिका है और हिंसा मुक्त समाज के लिए युवा सोच को प्रेरित करने हेतु राष्ट्रीय महिला आयोग ने केंद्रीय विद्यालय संगठन के साथ मिलकर समग्र जेंडर जागरूकता और विधिक जागरूकता कार्यक्रम शुरू किया। इसके तहत केंद्रीय विद्यालयों के 11वीं और 12वीं कक्षा के विद्यार्थियों को 'महिलाओं से जुड़े प्रमुख कानूनों' की पुस्तिका के साथ-साथ जेंडर जागरूकता पर सामग्री उपलब्ध कराई गई। विद्यार्थियों के उपयोग के लिए यह पुस्तिका आयोग की वेबसाइट पर भी उपलब्ध कराई गई।

महिलाओं और पुरुषों के बीच समानता लाने और महिलाओं के साथ हिंसा समाप्त करने की दिशा में हमने बड़ा लंबा सफर तय किया है। इतने वर्षों में मानव जाति पर आए कष्टों के साथ-साथ महिलाओं को खुद पर आई विपदाओं का भी सामना करना पड़ा है और यह कहा जा सकता है कि महिलाओं ने अपनी हर जंग बहादुरी से लड़ी है। महिलाओं के लिए समानता सुनिश्चित करना, समाज के नाते, हमारी सामूहिक जिम्मेदारी है और हमें तब तक नहीं रुकना चाहिए जब तक हर महिला, चाहे किसी भी वर्ग से हो, स्वतंत्र और गरिमापूर्ण जीवन व्यतीत नहीं करती। ■

प्रकाशन विभाग के विक्रय केंद्र

नई दिल्ली	पुस्तक दीर्घा, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड	110003	011-24367260
दिल्ली	हाल सं. 196, पुराना सचिवालय	110054	011-23890205
नवी मुंबई	701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर	400614	022-27570686
कोलकाता	8, एसप्लानेड ईस्ट	700069	033-22488030
चेन्नई	'ए' विंग, राजाजी भवन, बसंत नगर	600090	044-24917673
तिरुअनंतपुरम	प्रेस रोड, नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट	695001	0471-2330650
हैदराबाद	कमरा सं 204, दूसरा तल, सीजीओ टावर, कवाड़ीगुड़ा, सिकंदराबाद	500080	040-27535383
बेंगलुरु	फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला	560034	080-25537244
पटना	बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ	800004	0612-2683407
लखनऊ	हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, क्षेत्र-एच, अलीगंज	226024	0522-2325455
अहमदाबाद	4-सी, नेप्चून टॉवर, चौथी मंजिल, नेहरू ब्रिज कॉर्नर, आश्रम रोड, अहमदाबाद	380009	079-26588669

शहरी इलाकों में बढ़ती स्वच्छता

दुर्गाशंकर मिश्रा

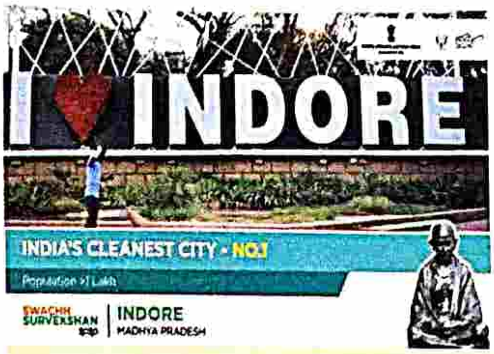

एक समय था जब 'खुले में शौच से मुक्त' (ओ.डी.एफ.) होने की बात कोई सोच भी नहीं सकता था और शहरी इलाकों में केवल 18 प्रतिशत ठोस अपशिष्ट का ही प्रसंस्करण हो पाता था। जाहिर है प्रधानमंत्री की स्वच्छ भारत की परिकल्पना को पांच वर्ष की समय सीमा में साकार करने के लिए त्वरित दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक था। इस कारण इस कार्य की प्रगति की कड़ी निगरानी के लिए एक खाका होना जरूरी था। साथ ही स्वच्छता के प्रमुख मानदंडों के कार्यनिष्पादन में सुधार के लिए शहरों और राज्यों में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना होना भी आवश्यक था। इस अंतर्निहित विचार से ही स्वच्छ सर्वेक्षण की अवधारणा ने जन्म लिया और इस पर अमल शुरू हुआ। स्वच्छ सर्वेक्षण साफ-सफाई के बारे में आवासन और शहरी कार्य मंत्रालय द्वारा संचालित किया जाने वाला वार्षिक सर्वेक्षण है जिसने आज विश्व के सबसे बड़े शहरी स्वच्छता अभियान का रूप ले लिया है

स्वच्छ सर्वेक्षण की आवश्यकता

स्वच्छ सर्वेक्षण की अभिकल्पना एक प्रतिस्पर्धी निगरानी अवसंरचना/उपाय के तौर पर की गयी है और यह अभिशासन की रफ्तार बढ़ाने का सबसे कारगर औजार है। इससे भारत को चिरस्थायी स्वच्छता और अपशिष्ट प्रबंधन के लक्ष्य को हासिल करने में मदद मिलने के साथ-साथ विकास के अन्य प्रमुख लक्ष्यों को प्राप्त करने के भारत सरकार के तौर-तरीकों में आमूल परिवर्तन लाने में भी मदद मिली है। स्वच्छता सर्वेक्षण में उपयोग किये जाने वाले डेटा संकलन के बहुआयामी तरीकों और आकलन की सुदृढ़ प्रविधि ने शहरों में शहरी स्वच्छता की स्थिति में सुधार लाने और अपने नागरिकों को बेहतरीन सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना का उत्साह जगाया है।

स्वच्छ सर्वेक्षण का मूल्यांकन और पैमाना

स्वच्छता के इस सफर की शुरुआत 2016 में देश के 10 लाख से अधिक आबादी वाले केवल 73 शहरों से हुई और तबसे इनकी संख्या में कई गुना वृद्धि हुई है। 2020 में देश के 4,242 शहर इसमें शामिल हो चुके हैं।

स्वच्छ सर्वेक्षण का विकास और विस्तार

2016 में 10 लाख से अधिक आबादी वाले केवल 73 शहरों से शुरू हुई स्वच्छ सर्वेक्षण की यात्रा आज लंबा सफर तय कर चुकी है और 2020 में 4,242 शहर इसके दायरे

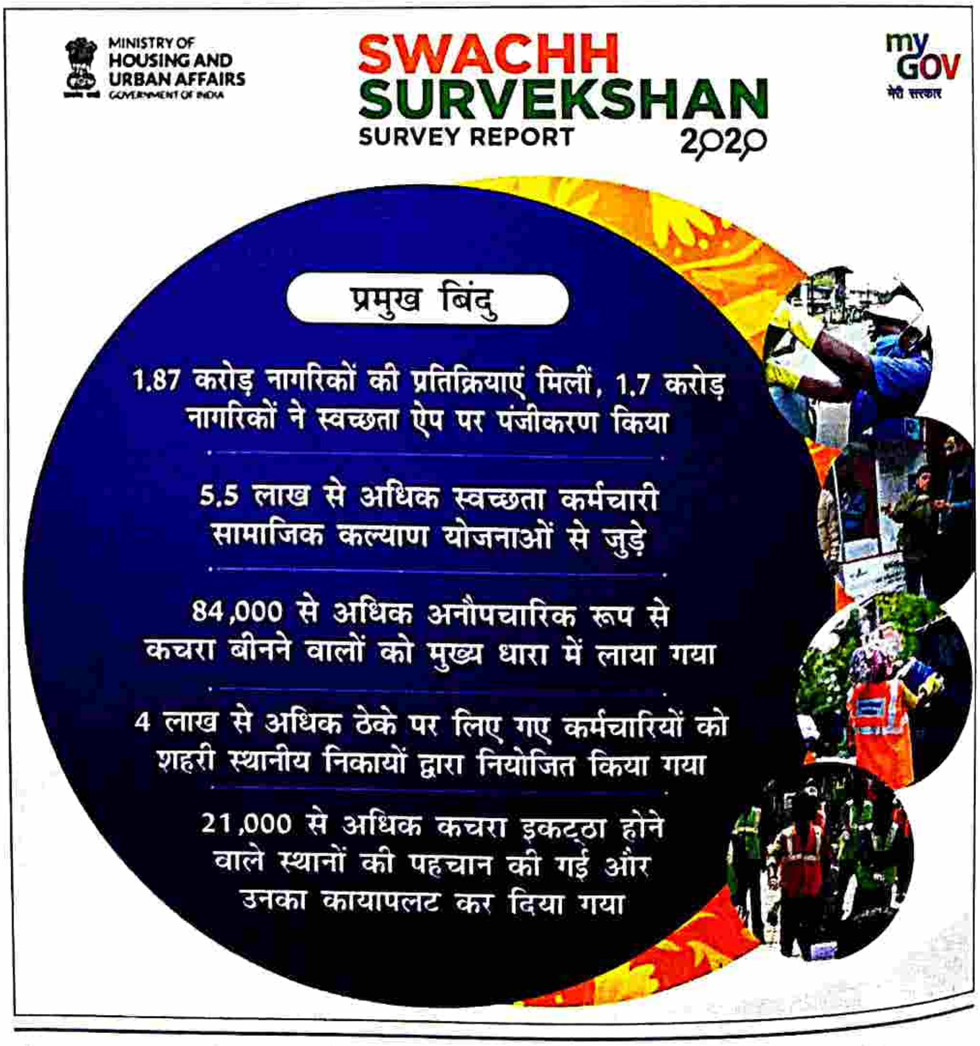

लेखक भारत सरकार के आवासन और शहरी कार्य मंत्रालय के सचिव हैं। ईमेल: secyurban@nic.in

टेबल 1: स्वच्छ सर्वेक्षण की शुरुआत और बीते वर्षों में इसका बढ़ता दायरा

वर्ष	2016	2017	2018	2019	2020	2021
शहरों की संख्या	73	434	4203	4237	4242	घोषित होगा
केंद्र बिंदु	भौतिक प्रगति का मापन	किये गये कार्य का मापन	परिणामों का आकलन	मानक प्रोटोकोल लागू करने से निरंतरता	पाक्षिक लीग सर्वेक्षण से परिणामों की निरंतरता	साझा मंच के जरिए सभी आकलनों को शामिल करने का साझा तरीका
नागरिकों से प्राप्त फीडबैक	1 लाख	18 लाख	38 लाख	64 लाख	187 लाख	
सबसे स्वच्छ शहर	मैसूर	इंदौर	इंदौर	इंदौर	इंदौर	

में आ चुके हैं। इस तरह, स्वच्छ सर्वेक्षण में करीब 60 गुना वृद्धि हुई है और लगभग समूचा शहरी भारत आज इसके अंतर्गत आ चुका है।

दक्षतापूर्ण सर्वेक्षण का पूर्णतः डिजिटल और कागज रहित तरीका

अब तक स्वच्छ सर्वेक्षण के पांच दौर हो चुके हैं और छठे सर्वेक्षण के लिए 3 जुलाई 2020 को प्रारूप जारी किया जा चुका है। जहां पहले तीन दौर में कागज आधारित मूल्यांकन प्रणाली का उपयोग किया गया, वहीं 2019 से इसे पूरी तरह डिजिटल तरीके से आयोजित किया जा रहा है और इसमें कागज का कोई उपयोग नहीं हो रहा है। इस तरह अभिशासन को लेकर मिशन के दृष्टिकोण में आमूल परिवर्तन होता दिखाई देता है।

सर्वेक्षण के डिजिटल तरीके में शहरी स्थानीय निकाय स्वच्छ सर्वेक्षण पोर्टल पर सभी सहायक दस्तावेज ऑनलाइन भेजते हैं। इसके लिए अलग से स्वच्छ सर्वेक्षण पोर्टल बनाया गया है जिसमें अभियान के क्रियान्वयन से संबंधित सभी घटकों में प्रगति को दर्शाया जाता है। संक्षेप में 4.5 लाख से अधिक ऑनलाइन दस्तावेज से करीब 20 मीट्रिक टन कागज की बचत संभव हुई है। इससे कार्य दक्षता में सुधार हुआ है, कार्यालयों में बहुमूल्य जगह बचाई जा सकी है, समय व पैसे की किफायत हुई है और सबसे महत्वपूर्ण बात यह हुई है कि इसने लोगों को पर्यावरण के प्रति और अधिक जागरूक बना है। दिलचस्प बात यह है कि सर्वेक्षण के डिजिटाइजेशन की प्रक्रिया में सर्वेक्षण की वास्तविक अवधि जो 2018 में 66 दिन थी, 2019 और इसके बाद के वर्षों में घट कर 28 दिन हो गयी है। इससे यह संकेत मिलता है कि स्वच्छ सर्वेक्षण की कार्य दक्षता में साल दर साल वृद्धि का सिलसिला जारी है।

तरीका और प्रविधि : प्रमुख घटक

स्वच्छ सर्वेक्षण का डिजायन तीन प्रमुख स्तंभों पर आधारित है जो इस प्रकार हैं:

1. **सेवा स्तर पर प्रगति**- अगर खुले में शौच की बुराई से मुक्ति के आधार पर स्थिति का आकलन, कूड़े-कचरा की छंटाई करके उसका संग्रहण, प्रसंस्करण, ठोस कचरे का निस्तारण और चिरस्थायी स्वच्छता के आधार पर प्रगति का मूल्यांकन किया जाए तो प्रगति का जो दावा किया जा रहा है उसकी पुष्टि नागरिकों और इलाके की यात्रा से हो जाती है।
2. **नागरिकों की आवाज**- इसके अंतर्गत प्रत्यक्ष फीडबैक, नागरिकों के साथ संपर्क और नागरिकों द्वारा की गयी नयी खोजों के आधार पर शहरों का मूल्यांकन किया जाता है।
3. **प्रमाणन**- मंत्रालय के प्रमाणन प्रोटोकोल जैसे, कूड़े-कचरे से मुक्त शहरों की स्टार रेटिंग और ओ.डी.एफ./ओ.डी.एफ. प्लस/ओ.डी.एफ. प्लस-प्लस/वाटर प्लस के आधार पर शहरों के कार्यनिष्पादन में प्रगति का मूल्यांकन।

जहां वार्षिक मूल्यांकन सभी शहरी स्थानीय निकाय हर साल 4 जनवरी से 31 जनवरी तक करते हैं, वहीं इससे पहले स्वच्छ सर्वेक्षण लीग (इसकी शुरुआत 2019 में हुई थी) का आयोजन भी किया जाता है जिसका उद्देश्य शहरों में हुई प्रगति को बनाए रखने के साथ-साथ सेवा प्रदान करने के स्तर पर कार्यनिष्पादन का लगातार आकलन करना है। 2020 में स्वच्छ सुरक्षा लीग का आयोजन तीन तिमाहियों में किया गया और इसके लिए 25 प्रतिशत वेटेज दिया जाता है और इसे शहरों की अंतिम रैंकिंग में शामिल कर लिया जाता है।

बॉक्स 1 : निरंतर आकलन

स्वच्छ सर्वेक्षण : शहरों को चौबीसों घंटे कार्रवाई के लिए प्रेरित करना

- शहर अपनी प्रगति को एसबीएम-शहरी (स्वच्छ भारत मिशन-यू) पोर्टल पर मासिक आधार पर अद्यतन करते हैं जिसमें सर्वेक्षण के सभी संकेतकों में हुई प्रगति को दर्शाया जाता है।
- शहर को प्रगति के अपने दावे के प्रमाण के रूप में पोर्टल पर निश्चित समय सीमा के भीतर दस्तावेज अपलोड कराना आवश्यक है।
- किसी स्वतंत्र एजेंसी से आंकड़ों का सत्यापन और पुष्टि करायी जाती है। इसमें टेलीफोन पर या इलाके का दौरा करके नागरिकों के साथ बातचीत भी की जाती है। आकलन करने वाले, शहरों के विभिन्न इलाकों का औचक दौरा करते हैं और उनके आने-जाने को जीओ टैग किया जाता है।

टेबल 2 : स्वच्छ भारत मिशन-शहरी की उपलब्धियां

मानदंड	2014	सितंबर 2020
खुले में शौच से मुक्त (ओडीएफ)	शहरों में ओडीएफ जैसी कोई सोच नहीं थी	समूचा शहरी भारत[1]
घरेलू शौचालयों का निर्माण	12.9 लाख	66.56 लाख
सामुदायिक/सार्वजनिक शौचालयों का निर्माण	55,000	6.24 लाख
ओडीएफ प्लस प्रमाणन	ओडीएफ प्लस जैसी कोई सोच नहीं	1319 शहर
ओडीएफ प्लस-प्लस प्रमाणन	ओडीएफ प्लस जैसी कोई सोच नहीं	489 शहर
घर-घर कूड़ा संग्रह	नगण्य	97 प्रतिशत
स्रोत पर ही कूड़े की छंटाई	ऐसी कोई सोच नहीं	77 प्रतिशत
अपशिष्ट प्रसंस्करण	18 प्रतिशत	67 प्रतिशत
कूड़ा-कचरा मुक्त शहर	ऐसी कोई सोच नहीं	6 पांच सितारा शहर
		86 तीन सितारा शहर
		64 एक सितारा शहर

स्वच्छ सर्वेक्षण का प्रभाव

स्वच्छ सर्वेक्षण से आवासन और शहरी कार्य मंत्रालय को स्वच्छ भारत मिशन-शहरी की उपलब्धियों को और तेज करके शहरी भारत को 'सम्पूर्ण स्वच्छता' के लक्ष्य को हासिल करने की दिशा में शीघ्रता से अग्रसर कराने में मदद मिली है जैसा कि टेबल-2 में दिखाया गया है।

क. निरंतर स्वच्छता के मार्ग पर अग्रसर भारत

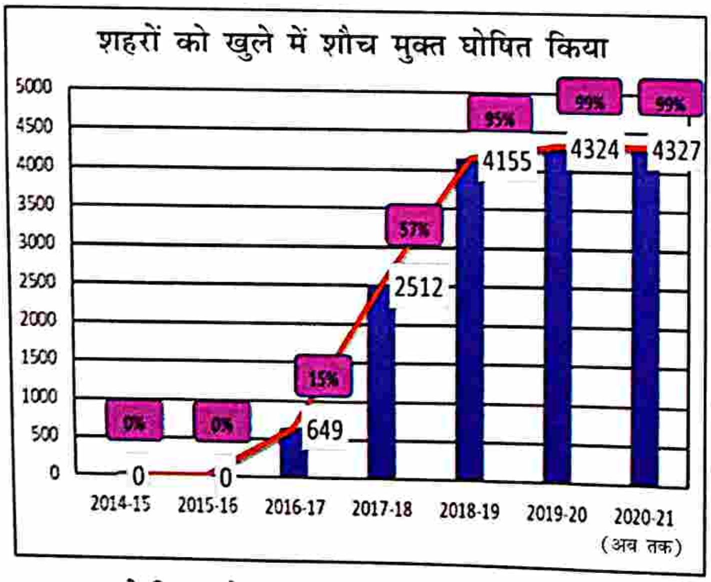

ग्राफ-1: ओडीएफ के लक्ष्य को हासिल करने की दिशा में प्रगति

आज शहरी भारत ओडीएफ ही नहीं हुआ है बल्कि उसने स्वच्छता मिशन के लक्ष्यों से भी आगे जाकर ओडीएफ प्लस और ओडीएफ प्लस-प्लस जैसे मानदंडों के जरिए सामुदायिक/सार्वजनिक शौचालयों, अवजल शोधन और जल-मल प्रबंधन से आरोग्य और स्वच्छता बनाए रखने पर ध्यान केन्द्रित करना शुरू कर दिया है। आज की तारीख में 1,319 शहरों को ओडीएफ प्लस और 489 को ओडीएफ प्लस-प्लस प्रमाणपत्र मिल चुका है जिसका श्रेय मुख्य रूप से स्वच्छ सर्वेक्षण ढांचे को दिया जा सकता है जिसमें स्वच्छता को चिरस्थायी बनाने की अंतर्निहित व्यवस्था कर ली गयी है।

> *ऐसे सभी शहरों को शुभकामनाएं जिन्होंने #SwachhSurvekshan 2020 में शीर्ष स्थान प्राप्त किये हैं। मेरी कामना है कि अन्य शहरों को भी स्वच्छता सुनिश्चित करने के अपने प्रयासों को और तेज करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। इस तरह की प्रतिस्पर्धा की भावना स्वच्छ भारत मिशन को मजबूत करती है और करोड़ों लोगों को फायदा पहुंचाती है।*
>
> *— नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री*

ठोस अपशिष्ट प्रबंधन में लंबी छलांग से शहरों को कूड़े-कर्कट से मुक्ति

2014 में एसबीएम-यू के शुभारंभ के समय सिर्फ 14 प्रतिशत ठोस अपशिष्ट का प्रसंस्करण संभव हो पाता था। स्वच्छ सर्वेक्षण ने सभी शहरों को ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के अपने तौर-तरीकों में सुधार के लिए प्रेरित किया। शहरों को घर-घर जाकर कूड़े का संकलन करने, उसकी छंटाई और प्रसंस्करण करने को बढ़ावा दिया गया। इसके परिणाम संख्या की दृष्टि से स्पष्ट दिखाई देते हैं। ठोस अपशिष्ट प्रबंधन में तीन गुना से अधिक की बढ़ोतरी हुई है और अब 67 प्रतिशत कूड़े-कचरे का प्रसंस्करण होने लगा है। इसी तरह कूड़े-कचरे से मुक्त शहरों के लिए स्टार रेटिंग प्रोटोकॉल को स्वच्छ सर्वेक्षण में समाहित कर दिया गया है जिससे शहरों को स्वच्छता के समग्र स्तर को प्राप्त करने को बढ़ावा मिला है। आज की तारीख में 6 शहरों को 5-स्टार, 86 को 3-स्टार और 64 को 1-स्टार शहर का दर्जा मिल चुका है।

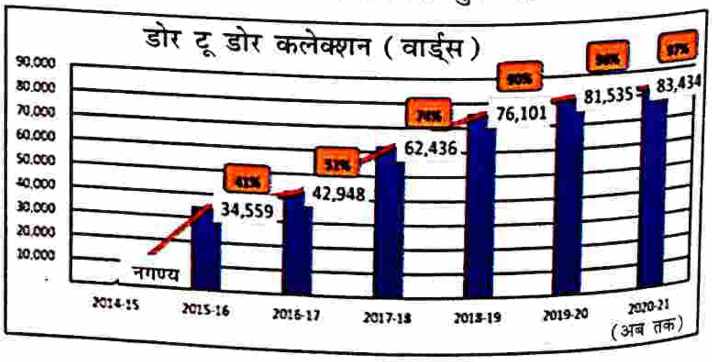

ग्राफ-2: घर-घर जाकर कूड़ा संग्रह (वार्ड)

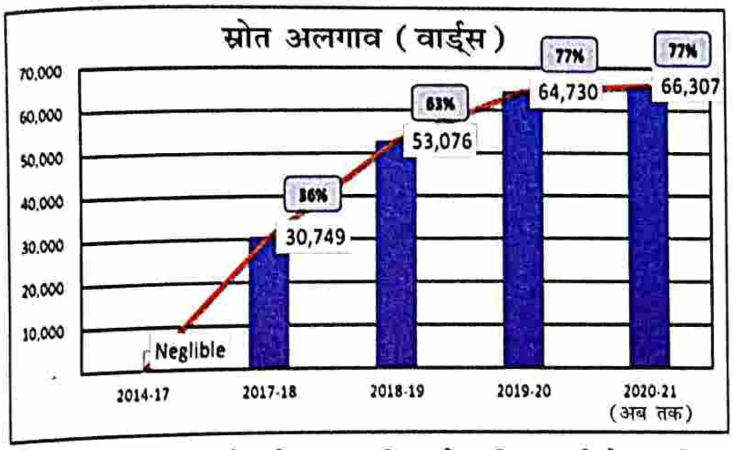

ग्राफ-3 : वार्डों में स्रोत पर ही कूड़े की छंटाई में प्रगति

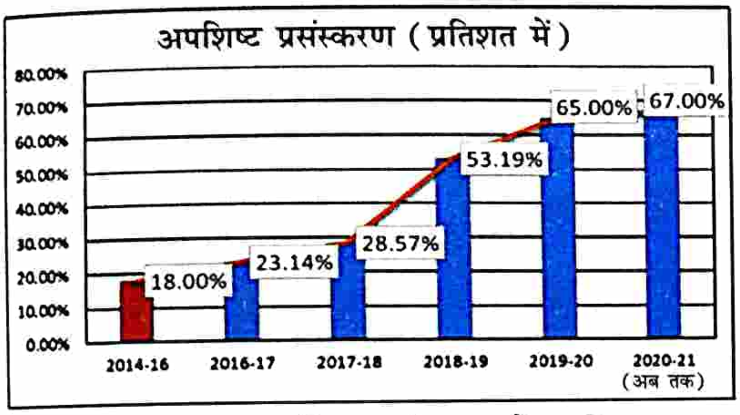

ग्राफ-4 : अपशिष्ट प्रसंस्करण में प्रगति

ख. नागरिकों के प्रभावी सहयोग से स्वच्छता योद्धाओं को एकजुट करने के प्रयास

स्वच्छ भारत मिशन का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष नागरिकों के व्यवहार में परिवर्तन लाना और स्वच्छता आंदालन को सही अर्थों में 'जनआंदोलन' बनाने का है। इस दिशा में सफलता का श्रेय स्वच्छ सर्वेक्षण को जाता है क्योंकि इसमें नागरिकों को शामिल करने और फीडबैक हासिल करने पर जोर दिया जा रहा है। उदाहरण के तौर पर स्वच्छ सर्वेक्षण-2020 में 1.87 करोड़ नागरिकों ने अपने फीडबैक दर्ज कराये। पहले सर्वेक्षण में सिर्फ एक लाख नागरिकों ने ही अपना फीडबैक दिया था जिसकी तुलना में यह बहुत बड़ी बढ़ोतरी हुई है। सर्वेक्षण के समग्र ढांचे में ही नागरिकों से जुड़ने के लिए कई पहल की गयी हैं। इनमें स्वच्छता योद्धाओं, एनजीओज़, स्वैच्छिक संगठनों, स्टार्ट अप्स और कंपनियों की सामाजिक जिम्मेदारी (सीएसआर) के तहत किये गये प्रयासों की पहचान करना और स्वच्छता के संदेश को ऐसे रचनात्मक व अभिनव तरीके से सम्प्रेषित करना भी शामिल हैं। इनसे न सिर्फ नागरिकों की व्यापक भागीदारी सुनिश्चित होती है बल्कि वे स्वयं अपने आप को शहर की स्वच्छता के लिए उत्तरदायी भी महसूस करते हैं।

ग. स्वच्छता कर्मियों/कूड़ा बीनने वालों का सम्मान, उन्हें मान्यता और सामाजिक सुरक्षा

स्वच्छ भारत मिशन-शहरी ने स्वच्छता कर्मियों और कूड़ा बीनने वालों की सामाजिक-आर्थिक दशा सुधारने पर काफी जोर दिया है। ये लोग जो समाज के उपेक्षित वर्गों से आते हैं और अपने काम की प्रकृति तथा सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था न मिलने से बड़े दुर्बल हैं। इस समूह के लोगों के कल्याण पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए बने-बनाए संकेतकों को समाहित किये जाने से कूड़ा बीनने का काम करने वाले 84,000 से अधिक कर्मियों को औपचारिक श्रम शक्ति में शामिल किया जा सका है। दूसरी ओर 4 लाख से अधिक अनुबंधित कर्मियों को शहरी स्थानीय निकायों में स्वच्छता योद्धा के रूप में नौकरी मिली है। इतना ही नहीं, 5.5 लाख से अधिक स्वच्छता कर्मी केन्द्र/राज्य सरकारों की विभिन्न समाज कल्याण योजनाओं का लाभ उठा रहे हैं।

घ. मिशन के परिणामों का डिजिटलीकरण

स्वच्छ सर्वेक्षण ने डिजिटल नवाचार को खुल कर बढ़ावा दिया है। क्रियान्वयन में दक्षता और पारदर्शिता लाने या नये उपाय शुरू करने के लिए कार्यनिष्पादन के कई संकेतक हैं जो शहरी स्थानीय निकायों को डिजिटल समाधान अपनाने को प्रेरित करते हैं ताकि इसके अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकें। टेक्नोलॉजी/डिजिटल इंटरफेस के उपयोग से जिन प्रक्रियाओं को स्थापित और चुस्त बनाया गया है वे संक्षेप में इस प्रकार हैं:

- शिकायत निवारण के उपाय के तौर पर स्वच्छता ऐप नागरिकों में लोकप्रिय हुआ है। इसे 1.7 करोड़ नागरिकों ने डाउनलोड किया है और इसके जरिए 1.97 करोड़ शिकायतें दर्ज कराई जा चुकी हैं। इनमें से 1.85 करोड़ शिकायतें निपटायी भी जा चुकी हैं।
- अब तक 2,900 से अधिक शहरों में 59,000 सार्वजनिक शौचालय ब्लॉकों को गूगल मैप्स पर लाइव प्रदर्शित किया जा रहा है।
- नागरिकों के लिए 'स्वच्छ मंच' नाम के एक डिजिटल संपर्क मंच का विकास किया गया है। इस मंच पर 7 करोड़ नागरिकों की भागीदारी वाले स्वच्छता से संबंधित 1.75 लाख आयोजन दर्ज किये जा चुके हैं।
- स्वच्छता और ठोस अपशिष्ट प्रबंधन पर 179 से अधिक पाठ्यक्रम ओपन डिजिटल मंच पर उपलब्ध कराये गये हैं।

ङ. जानकारी की कारगर और निर्बाध साझेदारी के लिए राज्यों/शहरों में क्षमता-निर्माण

स्वच्छ सर्वेक्षण अवसंरचना के जरिए नगर निकाय कर्मियों की क्षमता और जानकारी बढ़ायी गयी है। सर्वेक्षण कराने से पहले मंत्रालय शहरों की क्षमताओं में बढ़ोतरी के लिए समन्वित प्रयास करता है ताकि वे सर्वेक्षण के तौर-तरीकों को समझ सकें। स्वच्छ सर्वेक्षण 2017 से और उसके बाद 2018, 2019 और 2020 के सर्वेक्षणों में मंत्रालय ने हर साल 35 क्षेत्रीय कार्यशालाओं का आयोजन किया। स्वच्छ सर्वेक्षण 2020 की कार्यशालाओं में शहरी स्थानीय निकायों/राज्य सरकारों के 12,000 से अधिक कर्मचारियों ने हिस्सा लिया।

निगरानी के उपाय से लेकर अभिशासन में सुधार के प्रभावी साधन तक

स्वच्छ सर्वेक्षण का केवल पैमाना ही उल्लेखनीय नहीं है। स्वच्छ सर्वेक्षण के ढांचे की गतिशीलता का निरंतर विकास हुआ है। आज यह परिणामों का आकलन करने वाले मात्र एक निगरानी ढांचे से विकसित होकर क्रियान्वयन को गति प्रदान करने वाला उपाय बन गया है जिसके जरिए 'स्वच्छता' को संस्थागत रूप देकर परिणामों को चिरस्थायी बनाया जा रहा है।

स्वच्छ सर्वेक्षण रफ्तार, पैमाने और चुस्ती जैसी मूलभूत विशेषताओं को अपनाकर शहरी अभिशासन प्रणाली में महत्वपूर्ण बदलाव लाने में कामयाब रहा है। सर्वेक्षण की तीनसूत्री रणनीति से (यानी सेवा स्तर पर प्रगति, प्रमाणन और नागरिकों की आवाज) के साथ-साथ किसी स्वतंत्र संस्था द्वारा प्रमाणन की व्यवस्था करने से मूल्यांकन प्रक्रिया में विश्वसनीयता आयी है। इससे जहां सरकारी अधिकारियों को सर्वेक्षण के नतीजों से बेहतर निर्णय लेने में मदद मिली है, वहीं स्वच्छता और अपशिष्ट प्रबंधन संबंधी मुद्दों की पहचान करने, उनपर ध्यान देने और समयबद्ध तरीके से उनका समाधान खोजने में भी मदद मिली है। इसके साथ ही एक अन्य मुद्दा शहरों के संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग से जुड़ा है, और वह है मिशन के अंतर्गत लक्षित नतीजों को प्राप्त करने के लिए मिशन के अंतर्गत निधियों का किस तरह से आबंटन किया जाए और किस तरह उन्हें खर्च किया जाए।

सर्वेक्षण ने खरीद की प्रक्रिया को आसान बनाकर और शहरों/राज्यों को ई-मार्केटप्लेस (जीईएम-जेम) पोर्टल पर पंजीकरण कराने के लिए प्रोत्साहन देकर शहरों में काम करने वालों के लिए कारोबारी सुविधा को और अधिक बढ़ा दिया है। केन्द्र के स्तर पर सर्वेक्षण के ढांचे ने इस मिशन को देश भर में फैले शहरी स्थानीय निकायों को नये विचारों और समाधानों को बड़ी आसानी और शीघ्रता से अपनाने में सक्षम बनाया है।

यह बात ध्यान देने की है कि न सिर्फ शहरों का कार्यनिष्पादन, बल्कि नगर आयुक्त जैसे नगर प्रशासक भी स्वच्छ सर्वेक्षण में शहरों की रैंकिंग से सीधे जुड़ गये हैं। इस तरह यह सर्वेक्षण शहरों और उसके प्रशासकों के लिए 'रिपोर्ट कार्ड' की तरह हो गया है।

स्वच्छ सर्वेक्षण 2021 : प्रेरक दौर सम्मान से जुड़ा नया आयाम

मंत्रालय ने हाल में छठा स्वच्छता सर्वेक्षण शुरू किया है। स्वच्छ सर्वेक्षण 2021 के संकेतकों के तहत अवजल-उपचार यानी गंदे पानी की सफाई और उसे फिर से काम में लाने योग्य बनाने के साथ-साथ जल-मल प्रबंधन के मानदंडों पर ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है। इसी तरह, वर्षों से पड़े कूड़े के ढेरों का प्रबंधन और लैंडफिल की समस्या के समाधान के मसले भी इस सर्वेक्षण में सामने आ गये हैं जो कि स्वच्छ भारत मिशन 2.0 के लिए मंत्रालय की सोच के अनुरूप है। इस दौर के सर्वेक्षण की एक प्रमुख विशेषता **'प्रेरक दौर सम्मान'** है जो कार्यनिष्पादन की नयी श्रेणी है और जिससे हमारे शहरों को **'स्वच्छता'** के उच्चतर स्तरों तक पहुंचने को उत्साह जगेगा।

यह सम्मान स्वच्छता के क्षेत्र में पांच स्तर की उपलब्धियों के लिए दिया जाएगा जिनके नाम हैं : **दिव्य** (प्लेटिनम), **अनुपम** (स्वर्ण), **उज्ज्वल** (रजत), **उदित** (कांस्य) और **आरोही** (आकांक्षी)। स्वच्छता के ये स्तर निम्नलिखित चुने हुए संकेतकों के कार्यनिष्पादन पर आधारित होंगे।

- कूड़े-कचरे को छांटकर गीले, सूखे और खतरनाक की श्रेणी में अलग-अलग करना,
- कूड़े के प्रसंस्करण की क्षमता और शहर में उत्पन्न गीले कचरे का वास्तविक उपयोग,
- प्रसंस्करण क्षमता और शहर के सूखे कचरे का पुनर्चक्रण/वास्तविक उपयोग,
- निर्माण और ढहाने से उत्पन्न मलबे का प्रसंस्करण,
- लैंडफिल में फेंके जाने वाले कूड़े का कुल प्रतिशत,
- स्वच्छता (तरल अपशिष्ट प्रसंस्करण की स्थिति)।

निष्कर्ष

2016 में मामूली शुरुआत के बाद स्वच्छ सर्वेक्षण आज प्रेरणास्पद शक्ति, पहचान और स्वच्छता में गर्व अनुभव करने की भावना का प्रतीक बन गया है। यह एक ऐसी चीज बन गया है जिसकी लोग अपेक्षा करते हैं और अपने शहरों तथा राज्यों में इसके लिए कामना करते हैं। स्वच्छ सर्वेक्षण एक ऐसा ढांचा है जिसने सामाजिक परिणामों को प्राप्त करने में शहरी अभिशासन व्यवस्था में सही अर्थों में स्फूर्ति का संचार किया है। इस ढांचे की जड़ें 'सहकर्मियों के दबाव' में समायी हुई हैं और इसमें जनता की सक्रिय साझेदारी, जागरूकता और प्रतिस्पर्धा के साथ विभिन्न अन्य क्षेत्रों में अभिशासन व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करने की क्षमता है। ■

टिप्पणी

1. पश्चिम बंगाल के 45 शहरी स्थानीय निकायों को छोड़कर।

सभी के लिए भोजन

नरेश गुप्ता

भारत से भुखमरी का नामो-निशान मिटाने के लिए अभी बहुत लंबा रास्ता तय करना बाकी है। देश को आर्थिक सुधार के मार्ग पर अग्रसर हुए 25 साल से भी अधिक हो चुके हैं और इस दौरान देश की अर्थव्यवस्था में कई आमूलचूल परिवर्तनकारी संरचनात्मक बदलाव हुए हैं जिससे योजना बनाने वालों को कृषि से हटकर सेवा और विनिर्माण क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित करने का प्रोत्साहन मिला है। अब इस बात को प्राथमिकता दी जा रही है कि कृषि क्षेत्र और खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराने में उसकी केन्द्रीय भूमिका, गरीबी में कमी लाने और रोज़गार के अवसर प्राप्त करने पर ध्यान केन्द्रित किया जाए।

भारत में भुखमरी की स्थिति[1]

एक अरब 30 करोड़ की जनसंख्या वाले भारत में पिछले दो दशकों में जबरदस्त प्रगति हुई है। देश के सकल घरेलू उत्पाद में साढ़े चार गुना वृद्धि हुई है और प्रति व्यक्ति उपभोग भी तीन गुना बढ़ गया है। इसी तरह खाद्यान्न उत्पादन करीब दो गुना बढ़ा है। लेकिन शानदार औद्योगिक और आर्थिक प्रगति के बावजूद भारत अल्पपोषण की समस्या से जूझ रहा है। संयुक्त राष्ट्र खाद्य और कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) की रिपोर्ट 'द स्टेट ऑफ फूड सिक्योरिटी एंड द न्यूट्रीशन इन द वर्ल्ड, 2020' के अनुमानों के अनुसार भारत की जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त खाद्यान्न उत्पादन के बावजूद 18.92 करोड़ लोग, यानी 14 प्रतिशत आबादी अल्पपोषण की समस्या का सामना कर रही है। भुखमरी की समस्या बड़ी जटिल है और इसे विभिन्न आयामों को बताने के लिए अलग-अलग शब्दों का उपयोग किया जाता है।

आम तौर पर भुखमरी शब्द का अर्थ भोजन में ऊर्जा की आवश्यकता पूरी करने के लिए पर्याप्त कैलोरी के अभाव से लगाया जाता है।

लेकिन **अल्पपोषण** का संबंध कैलोरी की कमी से भी परे की स्थिति से है और यह ऊर्जा, प्रोटीन, और/या आवश्यक विटामिनों तथा खनिजों में से किसी एक या अनेक अथवा सभी की कमी का भी द्योतक है। अल्पपोषण या तो गुणवत्ता या मात्रात्मक दृष्टि से भोजन की कम मात्रा के सेवन का परिणाम होता है; हालांकि यही स्थिति संक्रमण या अन्य बीमारियों अथवा अनेक अन्य कारणों के संयोग से भी हो सकती है। ये कारण अनेक घटकों से उत्पन्न हो सकते हैं जिनमें परिवार में खाद्य असुरक्षा का होना, माताओं और बच्चों की देखभाल के उपयुक्त तौर-तरीकों को अपनाने में कमियां; या स्वास्थ्य सेवाओं, स्वच्छ पेयजल और साफ-सफाई की सुविधाओं की अपर्याप्त उपलब्धता आदि शामिल हैं।

कुपोषण का संबंध मोटे तौर पर अल्पपोषण (कमी की वजह से होने वाली समस्याओं) और अतिपोषण (असंतुलित खुराक से उत्पन्न समस्याओं का संबंध शरीर की आवश्यकता से कहीं अधिक कैलोरी का उपयोग करना भी हो सकता है, भले ही उसमें सूक्ष्म पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा हो या न हो)।

वैश्विक भुखमरी सूचकांक (जीएचआई)

रिपोर्ट के अनुसार 'भुखमरी' चार घटक संकेतकों पर आधारित है। अगर इन सब को साथ रखकर विचार किया जाए तो ये घटक संकेतक कैलोरी की कमी के साथ-साथ भोजन में सूक्ष्म तत्वों की कमी की ओर भी इशारा करते हैं।

सकल भुखमरी सूचकांक (जीएचआई)

सकल भुखमरी सूचकांक के आंकड़ों की गणना तीन चरण वाली प्रक्रिया के जरिए की जाती है जिसमें विभिन्न स्रोतों से प्राप्त हुए, पहले से उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर भुखमरी की कुपोषण

लेखक भारतीय प्रशासनिक सेवा के सेवानिवृत्त अधिकारी और तमिलनाडु राज्य नियोजन आयोग के पूर्व सदस्य सचिव हैं। हाल ही में उन्होंने 'ह्यूमन डिवेलपमेंट इन इंडिया' पुस्तक लिखी है। ईमेल: gupta_naresh_06@yahoo.co.in

संबंधी प्रकृति का आकलन किया जाता है। पहले चरण में हर देश के लिए अपर्याप्त खाद्य आपूर्ति, बच्चों में अल्पपोषण और बाल मृत्युदर जैसे तीन आयामों के लिए मापन-मूल्य निर्धारित कर दिये जाते हैं। पहले आयाम के तहत अल्पपोषण और दूसरे आयाम के तहत कम वजन और शारीरिक बढ़वार के रुकने को रखा जाता है। तीसरे आयाम में मृत्यु दर को रखा जाता है जैसा कि नीचे दिया गया है:

1. अल्पपोषण : अल्पपोषित जनसंख्या का हिस्सा (पीयूएन)।
2. बच्चों का कम वजन : पांच साल से कम उम्र के कम भार वाले बच्चों का हिस्सा (सीडब्लूए)।
3. बच्चों का शारीरिक विकास रुकना : पांच साल से कम उम्र के ऐसे बच्चों का हिस्सा जिसकी बढ़वार रुकी हुई है (सीएसटी)।
4. बाल मृत्युदर : पांच साल से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु दर (सीएम)।

भारत सरकार 2030 के सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पूरी दृढ़ता से वचनबद्ध है। भारत मे इस समय पोषण की जो स्थिति है उससे भी सुदृढ़ नीतिगत पहल के प्रति उच्च स्तर की राष्ट्रीय वचनबद्धता का औचित्य साबित होता है। ऐसी पहल देश में तमाम तरह के कुपोषण से निबटने के लिए प्रमाण और जानकारी पर आधारित होनी चाहिए।

दूसरा, चार घटक संकेतकों में से प्रत्येक को 100-अंकों के पैमाने पर एक मानकीकृत आंकड़ा दिया जाता है जो उस संकेतक के हाल के दशकों में वैश्विक पैमाने पर प्रेक्षित उच्चतम स्तर के आधार पर होता है। तीसरा मानकीकृत आंकड़ा प्रत्येक देश के समेकित जीएचआई आंकड़े के आकलन से प्राप्त होता है और इसमें तीनों आयामों को बराबर का महत्व दिया जाता है। घटक संकेतकों का मानकीकरण इस प्रकार है:

मानकीकृत PUN = PUN × 100/80; मानकीकृत CWA = CWA × 100/30; मानकीकृत CST = CST × 100/70 और मानकीकृत CM = CM × 100/35.

इसके बाद घटक संकेतकों को 1/3 X मानकीकृत पीयूएन +1/6 X मानकीकृत सीडब्ल्यूए+1/3 X मानकीकृत सीएम = जीएचआई आंकड़ा।

10 से कम मूल्य 'कम भुखमरी', 20 से 349 गंभीर भुखमरी, 35 से 49.9 चेतावनी सूचक और 50 या इससे अधिक मूल्य को 'बेहद चेतावनी सूचक' माना जाता है।

जीएचआई की दृष्टि से भारत की प्रगति

वैश्विक भुखमरी सूचकांक रिपोर्ट 2019 में भारत 117 देशों में से 102 वें स्थान पर था। वैश्विक भुखमरी सूचकांक 2020 रिपोर्ट के अनुसार के अनुसार भारत 27.2 के सूचकांक के साथ 94वें स्थान पर था। भारत ने बीते वर्षों में काफी प्रगति की है जो ग्राफ-1 में दिये गये सकल भुखमरी सूचकांक से स्पष्ट है।

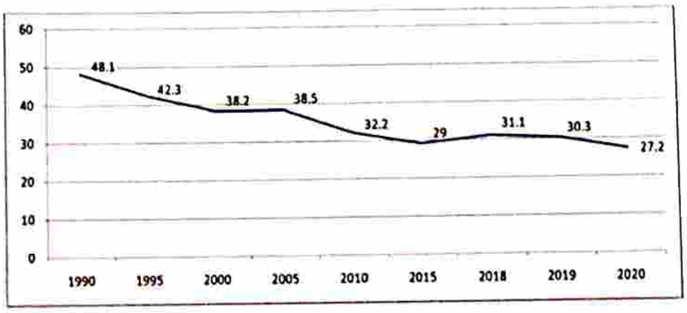

ग्राफ-1

भारत के राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों के लिए इसी अवधि के प्रकाशित आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं इसलिए इनके जीएचआई की गणना नहीं की जा सकती। बहरहाल, विस्तृत राष्ट्रीय पोषण सर्वेक्षण

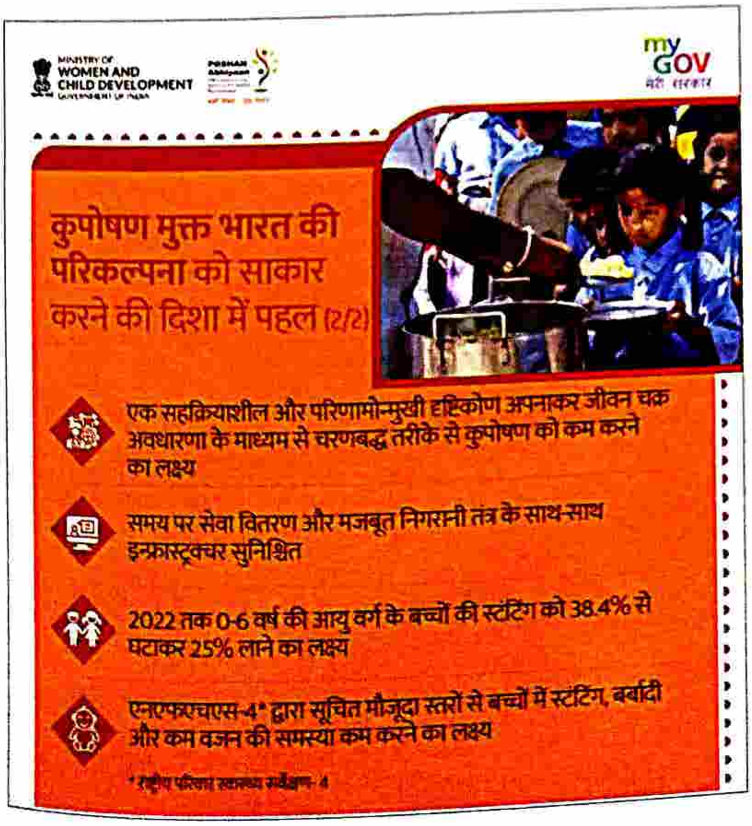

2016-18[2] में पोषण की स्थिति राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश वार काफी आंकड़े दिये गये हैं।

भारत सरकार 2030 के लिए सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने को पूरी दृढ़ता से वचनबद्ध है। भारत में पोषण की मौजूदा स्थिति से उसकी उच्चस्तरीय राष्ट्रीय प्रतिबद्धता का औचित्य सिद्ध होता है जिसमें देश में सभी तरह के कुपोषणों से निबटने के लिए प्रमाणों से पुष्टि पर आधारित मजबूत नीतिगत पहल की बात कही गयी है। पोषण अभियान3 के लिए महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं ताकि शारीरिक विकास न होने के मामलों में सालाना 2 प्रतिशत, वजन कम रहने के मामलों में 2 प्रतिशत, बच्चों, महिलाओं और किशोरियों में रक्ताल्पता के मामलों में[3] प्रतिशत की कमी लाई जा सके और जन्म के समय शिशु का भार कम होने के मामलों में भी 2 प्रतिशत वार्षिक की कमी लायी जा सके। इसके अलावा राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन में भी स्वास्थ्य प्रणाली को मजबूत करने, प्रजनन-मातृ-नवजात शिशुओं से संबंधित कार्यक्रमों वाले घटकों के साथ-साथ संचारी और गैर-संचारी रोगों की रोकथाम और उपचार (आरएमएनसीएच+ए) वाले घटक हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन में समता पर आधारित, किफायती और गुणवत्तापूर्ण ऐसी सेवाओं को सबकी पहुंच के दायरे में लाने का लक्ष्य रखा गया है जो जनता के स्वास्थ्य और आरोग्य के प्रति संवेदनशील और जवाबदेह हों। एनीमिया अब भी देश में सार्वजनिक स्वास्थ्य की प्रमुख समस्या बना हुआ है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी बच्चों में, खास तौर पर शिशुओं और स्कूल-पूर्व शिक्षा प्राप्त करने की उम्र के बच्चों में गंभीर बीमारियों और मृत्यु का बड़ा कारण है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के तहत समता पर आधारित ऐसी किफायती और गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ देखभाल सेवाएं सबको सुलभ कराने का लक्ष्य रखा गया है, जो जनता के स्वास्थ्य और कल्याण के प्रति संवेदनशील और जवाबदेह हों। एनीमिया रोग देश में अब भी एक प्रमुख स्वास्थ्य समस्या बना हुआ है।

भारत में कुपोषण का फैलाव- अवरुद्ध शारीरिक विकास, कम वजन और अल्प भार वाले बच्चे[4]

बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश सहित सबसे अधिक आबादी वाले कई राज्य में शारीरिक विकास के रुकने की दर बहुत ऊंची (37-42 प्रतिशत) है। मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु और झारखंड सहित अनेक राज्यों में कम भार (20 प्रतिशत या इससे अधिक) है। बिहार, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश और झारखंड अल्पभार (39 प्रतिशत या इससे अधिक) की समस्या से ग्रस्त हैं। पहले 1,000 दिनों की अवधि (गर्भ में निषेचन से दो साल तक)

टेबल-1 में भारत के राज्यों में 0-4 वर्ष तक के उम्र के बच्चों में अवरुद्ध बढ़वार, कम वज़न और अल्पभार के प्रतिशत को दिखाया गया है : सीएनएनएस 2016-18

क्र.	राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश/ भारत	0-4 साल के बच्चों की बढ़वार रुकने का प्रतिशत राज्यवार, भारत-सीएनएनएस 2016-18	0-4 साल के बच्चों के कम वजन की समस्या का प्रतिशत राज्यवार, भारत-सीएनएनएस 2016-18	0-4 साल के बच्चों का कम वजन का प्रतिशत राज्यवार, भारत-सीएनएनएस 2016-18
1	आंध्र प्रदेश	31.5	17.1	35.5
2	अरुणाचल प्रदेश	28.0	7.0	16.0
3	असम	32.4	19.4	29.4
4	बिहार	42.0	14.5	38.7
5	छत्तीसगढ़	35.4	19.3	40.0
6	दिल्ली	28.8	14.8	28.1
7	गोवा	19.6	15.8	20.3
8	गुजरात	39.1	17.0	34.2
9	हरियाणा	34.9	11.7	28.8
10	हिमाचल प्रदेश	28.4	11.0	22.6
11	जम्मू-कश्मीर	15.5	15.0	13.0
12	झारखंड	36.2	29.1	42.9
13	कर्नाटक	32.5	19.0	32.0
14	केरल	20.5	12.6	18.7
15	मध्य प्रदेश	39.5	19.6	38.7
16	महाराष्ट्र	34.1	16.9	30.9
17	मणिपुर	28.9	6.0	13.0
18	मेघालय	40.4	15.0	30.0
19	मिजोरम	27.4	5.8	11.3
20	नगालैंड	26.2	12.9	16.3
21	ओडिशा	29.1	13.9	29.2
22	पंजाब	24.3	6.7	19.7
23	राजस्थान	36.8	14.3	31.5
24	सिक्किम	21.8	7.0	11.0
25	तमिलनाडु	19.7	21.0	23.5
26	तेलंगाना	29.3	17.9	30.8
27	त्रिपुरा	31.9	12.8	23.8
28	उत्तर प्रदेश	38.8	18.5	36.8
29	उत्तराखंड	29.9	5.9	18.7
30	प. बंगाल	25.3	20.1	30.9

के अरसे को सबसे महत्वपूर्ण अवधि माना जाता है। इस दौरान पहल करके कुपोषण से जीवनभर के लिए होने वाले नुकसान को रोका जा सकता है।

सतत विकास लक्ष्य इंडिया इंडेक्स और डैशबोर्ड 2019-20

नीति आयोग ने सतत विकास लक्ष्य इंडिया इंडेक्स और डैशबोर्ड 2019-20 तैयार किया है जो इस बात का अनुमान लगाता है कि इस दिशा में कितनी प्रगति हुई है और लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अभी कितनी दूरी तय करना बाकी है। इसके लिए सतत विकास लक्ष्य इंडिया इंडेक्स का उपयोग किया जाता है जिसका संबंध गरीबी, भुखमरी और पोषण से है।

सतत विकास लक्ष्य 1 : कोई गरीबी नहीं

सतत विकास लक्ष्य 2 : कोई भूखा नहीं

सतत विकास लक्ष्य 2 : कोई भूखा नहीं - भुखमरी का नामो निशान मिटाने की दिशा में भारत के प्रदर्शन के आकलन के लिए राष्ट्रीय स्तर के सात संकेतकों की पहचान की गयी है। ये संकेतक सतत विकास के इन आठ लक्ष्यों में से तीन को 2030 तक प्राप्त करने के लिए हैं। सतत विकास लक्ष्य-2 के जो संकेतक लिये गये हैं वे इस प्रकार हैं:

1. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के दायरे में आने वाले ग्रामीण परिवारों का अनुपात, उन ग्रामीण परिवारों की तुलना में जहां

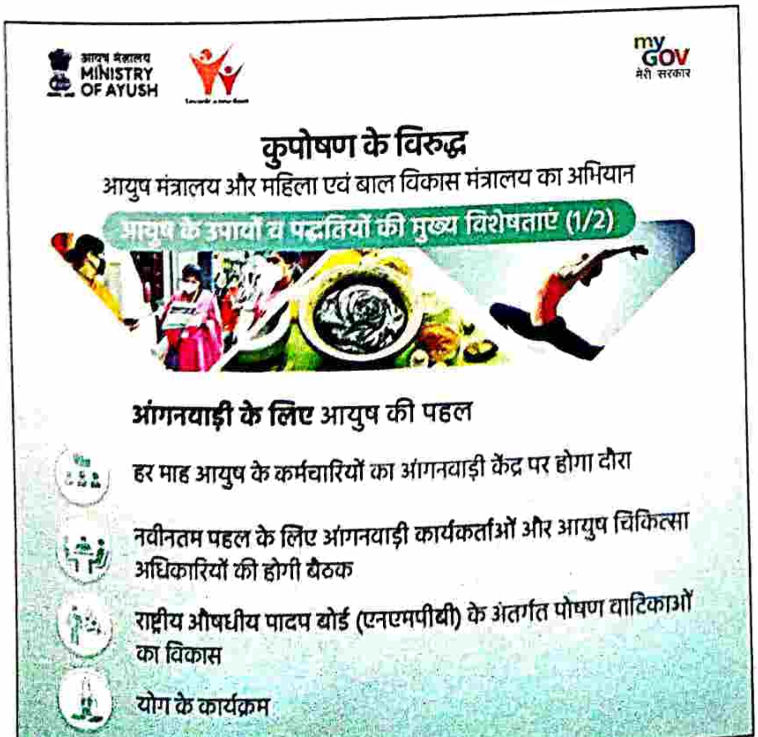

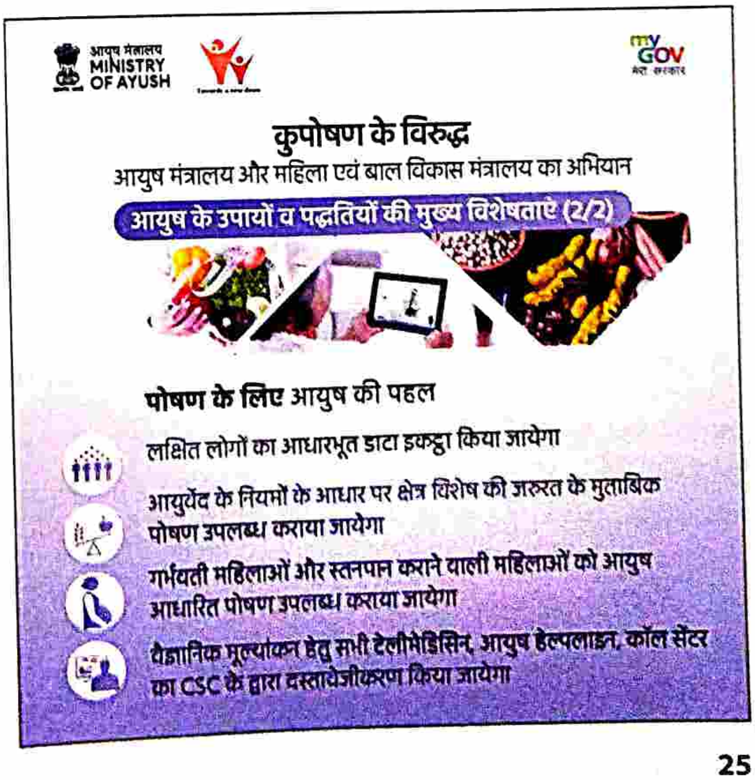

परिवार के सबसे अधिक आमदनी वाले सदस्य की मासिक आय 5,000 रुपये से अधिक है।

2. पांच साल से कम उम्र के ऐसे बच्चों का प्रतिशत जिनका शारीरिक विकास रुका हुआ है।
3. 15-49 साल उम्र की ऐसी गर्भवती महिलाओं का प्रतिशत जो रक्ताल्पता यानी एनीमिया से ग्रस्त हैं।
4. 6-59 महीने के ऐसे शिशुओं का प्रतिशत जो एनीमिया से ग्रस्त हैं (एचबी 11.0 ग्राम/डे.ली. से कम)
5. 0-4 साल तक की उम्र के ऐसे बच्चों का प्रतिशत अल्पभार की समस्या से ग्रस्त हैं।
6. प्रति इकाई क्षेत्र चावल, गेहूं और मोटे अनाज का वार्षिक उत्पादन (किलोग्राम प्रति हैक्टेयर)।
7. प्रति श्रमिक कृषि में सकल मूल्य संवर्धन।

सतत विकास लक्ष्य लक्ष्य-2 के सूचकांक के आंकड़े राज्यों के लिए 22 से 76 तक और केन्द्र शासित प्रदेशों के लिए 12 और 73 के बीच रहे हैं। राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में सबसे अच्छा प्रदर्शन करने वालों में से गोवा और चंडीगढ़ शामिल हैं। सात राज्य और दो केन्द्र शासित प्रदेश अग्रणी श्रेणी में रहे (उनके सूचकांक का आंकड़ा 65 के बराबर या इससे अधिक रहा)। लेकिन 20 राज्य और तीन केन्द्र शासित प्रदेश आकांक्षी श्रेणी से नीचे चले गये। (उनके सूचकांक का आंकड़ा 50 से नीचे चला गया)।

खाद्य और पोषण सुरक्षा

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 के अंतर्गत परिवर्तित सार्वजनिक वितरण प्रणाली का क्रियान्वयन परिवार के स्तर पर खाद्य सुरक्षा संबंधी रणनीति में आमूल परिवर्तन को प्रदर्शित करता है क्योंकि अब खाद्य सुरक्षा को सरकार का कल्याणकारी कदम न मानकर, जनता को उसका अधिकार दिलाने का प्रयास माना जाने लगा है। अन्त्योदय अन्न योजना (ए.ए.वाइ.) के तहत गरीबी रेखा से नीचे के सबसे गरीब परिवार हर महीने 35 कि.ग्रा. खाद्यान्न और भी सस्ते दामों पर पाने के हकदार हैं। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम में जीवनचक्र दृष्टिकोण अपनाया गया है जिसमें गर्भवती महिलाओं, शिशुओं को दुग्धपान कराने वाली माताओं और 6 महीने से 14 साल तक के बच्चों की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रावधान किये गये हैं। समन्वित बाल विकास सेवा के अंतर्गत 31 मार्च, 2019 तक 6 महीने से 6 साल तक के 7.03 करोड़ बच्चों और 1.71 करोड़ गर्भवती व शिशुओं को दुग्धपान कराने वाली महिलाओं को पोषक आहार सुलभ कराने की व्यवस्था की जा चुकी थी। मध्याह्न भोजन योजना, स्कूल जाने वाले प्राइमरी और उच्च प्राइमरी स्तर के 12 करोड़ से अधिक बच्चों के भोजन में पोषण के स्तर को बेहतर बनाने की एक अन्य पहल है। इसमें उन्हें दोपहर को स्कूलों में पका हुआ ऐसा भोजन उपलब्ध कराया जाता है जिसमें पोषण का स्तर 450 से 700 कैलोरी तक होता है।

राष्ट्रीय पोषण मिशन (पोषण अभियान) कई मंत्रालयों के सहयोग से शुरू किया गया समन्वित अभियान है जिसका शुभारंभ 2018 में अल्पपोषण, शारीरिक बढ़वार रुकने और रक्ताल्पता (एनीमिया) को दूर करने के लिए किया गया था। इसके अंतर्गत शारीरिक विकास रुकने के मामलों में 2 प्रतिशत, अल्पपोषण के मामलों में भी 2 प्रतिशत, एनीमिया (बालक-बालिकाओं और महिलाओं) में 3 प्रतिशत और जन्म के समय कम वजन के मामलों में 3 प्रतिशत की कमी लाना है। पोषण अभियान के तहत 0-6 साल तक के बच्चों को अवरुद्ध शारीरिक विकास रुकने के मामलों को 38.4 प्रतिशत से घटाकर 2022 तक 25 प्रतिशत के स्तर पर लाने का लक्ष्य है।

कृषि उत्पादकता और आमदनी

अनुमान है सन् 2032-33 तक भारत की जनसंख्या की खाद्यान्न की आवश्यकता को ठीक तरीके से पूरा करने के लिए 33.4-35.0 करोड़ टन अनाज की आवश्यकता होगी। सरकार किसानों की आमदनी दुगुना

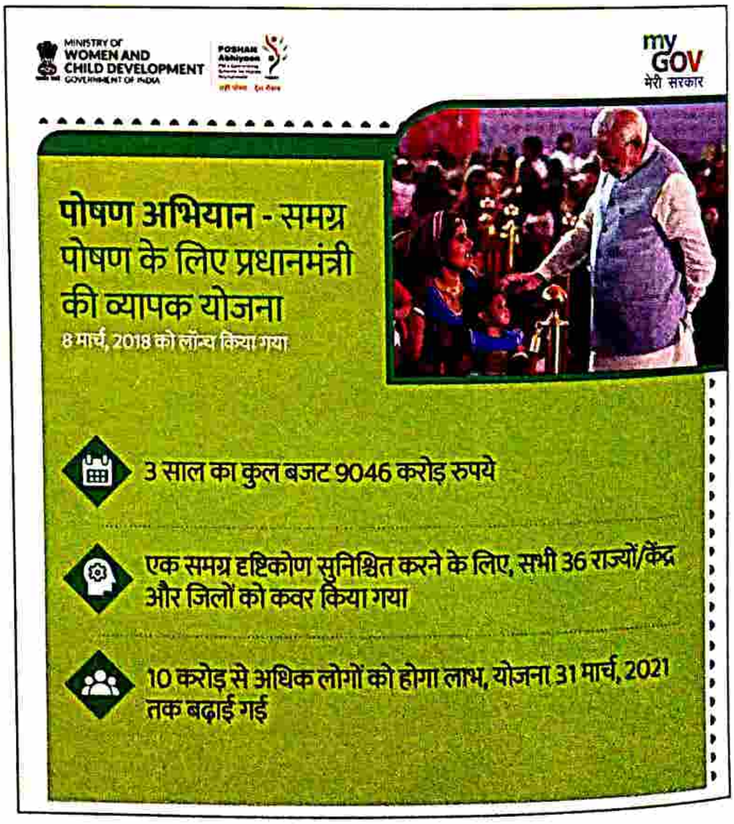

करने के लिए बहुआयामी रणनीति पर अमल कर रही है जिसके अंतर्गत विकास के सात घटकों पर ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है। ये हैं: फसलों की उत्पादकता में वृद्धि, पशुधन की उत्पादकता में वृद्धि, किफायती उत्पादन प्रक्रियाएं, फसलों की सघनता में वृद्धि, फसलों में विविधता लाकर उच्च मूल्य वाली फसलों का सघन उत्पादन, किसानों को उनकी उपज के बेहतर दाम दिलाना और लोगों को खेती की बजाय गैर-कृषि व्यवसायों को अपनाने को प्रेरित करना। अब तक देश भर में किसानों को 22.1 करोड़ मृदा स्वास्थ्य कार्ड वितरित किये जा चुके हैं जिससे उन्हें उर्वरकों के उपयोग को युक्तिसंगत बनाने में मदद मिली है। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना **'हर खेत को पानी'** और **'हर बूंद से अधिक पैदावार'** के नारे के साथ सिंचाई में काम आने वाले पानी के उपयोग में दक्षता बढ़ाने पर ध्यान केन्द्रित कर रही है। यह योजना सिंचाई की सप्लाई-चेन में आदि से अंत तक सभी समाधान, जैसे जल स्रोत, वितरण नेटवर्क और खेतों में उपयोग, उपलब्ध कराती है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना किसानों को 4 प्रतिशत वार्षिक की किफायती दर पर बेहतर बीमा कवरेज और कृषि ऋण उपलब्ध कराती है। खरीफ और रबी की सभी फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्यों में उत्पादन लागत के मुकाबले कम से कम 150 प्रतिशत की वृद्धि से भी किसानों की आमदनी बढ़ी है। इसके अलावा प्रधानमंत्री किसान योजना शुरू की गयी है जिसके अंतर्गत देश में प्रत्येक किसान को सालाना 6,000 रुपये दिये जाते हैं जिससे उनकी आमदनी और बढ़ी है। प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना के तहत अन्य घटकों के साथ-साथ मेगा फूड पार्कों, एग्रो-बिजनेस क्लस्टरों और समन्वित कोल्ड चेन तथा मूल्य संवर्धन अवसंरचना के लिए वित्त पोषण का कार्य भी प्रारंभ किया गया है।

देश के भुखमरी का नामो-निशान मिटाने के लिए भारत को अभी लंबा रास्ता तय करना बाकी है। देश को आर्थिक सुधार के मार्ग पर अग्रसर हुए 25 साल से भी अधिक हो चुके हैं और इस दौरान देश की अर्थव्यवस्था में कई आमूलचूल परिवर्तनकारी संरचनात्मक बदलाव हुए हैं जिससे योजना बनाने वालों को कृषि से हटकर सेवा और विनिर्माण क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित करने का प्रोत्साहन मिला है। अब कृषि क्षेत्र और खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराने में उसकी केन्द्रीय भूमिका, गरीबी में कमी लाने और रोज़गार के अवसर जुटाने के लिए कृषि पर फिर से ध्यान केन्द्रित करने को प्राथमिकता दी जा रही है। 2030 तक अपनी 1.6 अरब आबादी के साथ भारत के दुनिया का सबसे अधिक आबादी वाला देश बन जाने की संभावना है। अगर भारत सरकार और राज्य सरकार, खास तौर पर अधिक जनसंख्या वाले राज्यों की सरकारें ईमानदारी से जनसंख्या स्थिरीकरण कार्यक्रमों पर अमल नहीं करतीं तो खाद्य और पोषण सुरक्षा उपलब्ध कराना और भी बड़ी चुनौती बन जाएगा। ■

संदर्भ

1. https://www.indiafoodbanking.org/hunger, https://www.globalhungerindex.org/about.html
2. कॉम्प्रीहेंसिव नेशनल न्यूट्रीशन सर्वे, 2016-18/यूनीसेफ/एमओएफएच एंड एफडब्ल्यू।
3. पोषण अभियान (प्राइम मिनिस्टर्स ओवरचार्जिंग स्कीम फॉर होलिस्टिक न्यूट्रीशन मिशन-पोषण) या राष्ट्रीय पोषण मिशन भारत सरकार का प्रमुख कार्यक्रम है जिसका उद्देश्य बच्चों, गर्भवी महिलाओं और शिशुओं को स्तनपान कराने वाली माताओं के भोजन में पोषक तत्वों के स्तर पर सुधार करना है। राजस्थान के झुंझनूं में 8 मार्च, 2018 को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस पर प्रधानमंत्री द्वारा शुरू किये गये इस कार्यक्रम का उद्देश्य देश का ध्यान कुपोषण की समस्या की ओर आकर्षित करना और मिशन मोड में इसका समाधान करना है।
4. कॉम्प्रीहेंसिव नेशनल न्यूट्रीशन सर्वे, 2016-18/यूनीसेफ/एमओएफएच एंड एफडब्ल्यू।

बहुआयामी निर्धनता सूचकांक

डॉ राकेश कुमार
सिद्धार्थ कुमार

वैश्विक निर्धनता प्राक्कलन की अवधारणा का सूत्रपात 1970 के दशक में हुआ। वैश्विक रणनीतिकारों ने अत्यंत निर्धन विकासशील देशों की राष्ट्रीय निर्धनता रेखा के आधार पर अंतरराष्ट्रीय निर्धनता रेखा के लिए शोध किया। निर्धनता के समग्र आंकड़ों को मापने के लिए जिन सभी देशों ने बहुआयामी निर्धनता सूचकांक यानी एमपीआई को अपनाया। उनमें से सबसे अधिक लाभ भारत को हुआ है। यह इस तथ्य से सिद्ध होता है कि निम्न-मध्यम आय श्रेणी के देश भारत में सितम्बर, 2019 तक की जानकारी के अनुसार निर्धनता (एमपीआई के अनुसार) में सबसे तेजी से गिरावट दर्ज हुई है।

दक्षिण अमेरिकी महाद्वीप के उत्तर- पश्चिमी शिखर पर स्थित कोलम्बिया देश में 2011 में यह संकट उत्पन्न हो गया कि अपनी निर्धनता को कैसे मापा जाए। उस समय निर्धनता मापने का एक मात्र मानक था मुद्रा की निर्धनता, जबकि कोलम्बिया अपने परिवार, आय एवं व्याय सर्वेक्षण तथा महा समन्वित परिवार सर्वेक्षण (ओपीएचआई ब्रीफिंग 52, 2019)[1] से आंकड़े एकत्र और संकलित करने की कोशिश कर रहा था। मौद्रिक आय की गणना करने के लिए राष्ट्रीय नियोजन विभाग (डीएमपी) ने राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय विशेषज्ञों की समिति गठित की और उसे अलकिरे एवं फोस्टकर विधि को अपनाते हुए बहुआयामी निर्धनता की गणना करने की समानांतर प्रक्रिया विकसित करने का दायित्व सौंपा गया (ओपीएचआई ब्रीफिंग 52, 2019)। यही

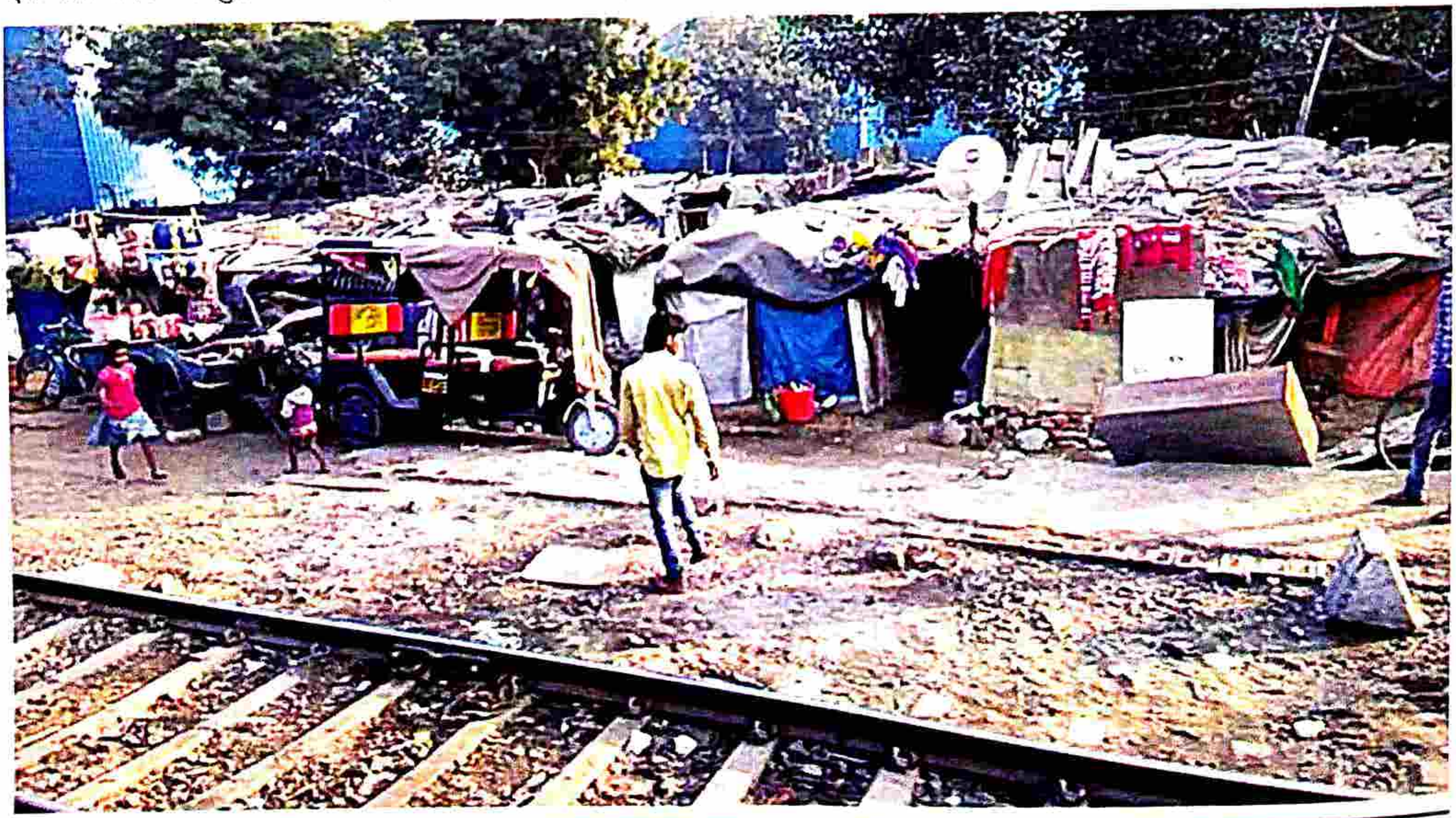

डॉ राकेश कुमार, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय में पूर्व संयुक्त सचिव और पॉपुलेशन सर्विसेज इंटरनेशनल, इंडिया में मुख्य सलाहकार हैं। ईमेल: rk1992.uk@gmail.com
सिद्धार्थ कुमार, पीरामल फाउंडेशन, भारत से जुड़े हैं।

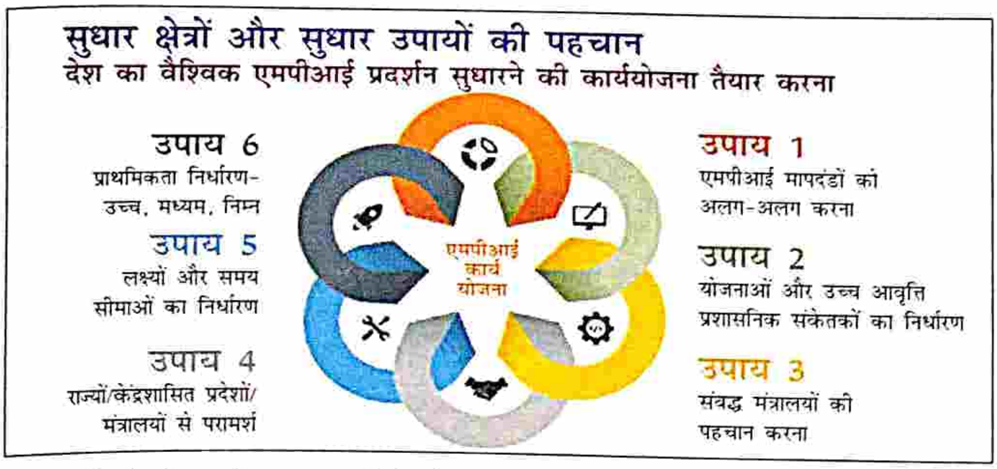

भविष्य में कोलम्बिया के बहुआयामी निर्धनता सूचकांक (एमपीआई-सीओ) का आकार लेने वाला था।

इस प्रक्रिया का सकारात्मक प्रभाव सबने देखा और इसने एमपीआई अवधारणा के महत्व को और पुष्ट किया। मार्च, 2017 में बुगोटा में एक गोष्ठी का आयोजन हुआ जिसमें इस बात पर बल दिया जाना था कि एमपीआई ने उनकी सामाजिक नीतियों के क्रियान्वयन पर कितना सकारात्मक प्रभाव डाला। इस गोष्ठी में रोबर्टो एंगुलो ने बताया कि राष्ट्रीय विकास योजना[2] में एमपीआई को शामिल किया जाना सामाजिक नीति के बेहतर क्रियान्वयन का प्रमुख कारण रहा। इसी गोष्ठी में एक और वक्त नेमेसियो रॉयस ने इस तथ्य की तरफ ध्यान आकर्षित किया कि एमपीआई के आधार पर विभिन्न कार्यक्रम तैयार किए गए ताकि जनसंख्या की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके।

कुल मिलाकर इससे बहुआयामी निर्धनता सूचकांक यानी एमपीआई का महत्व एकदम सटीक ढंग से उजागर होता है। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि निर्धनता सिर्फ धन का अभाव नहीं है, बल्कि इसके अनेक आयाम हैं। गरीबी के बोझ से दब रहे लोगों के सामने अनेक वास्तविक और संभावित दोनों तरह की वंचनाएं होती हैं।[3] ''वाइसेज ऑफ द पुअर''[4] नाम के मूल अध्ययन में भी इस बात से सहमति व्यक्त की गई है कि निर्धनता किसी एक विशेष वस्तु का अभाव नहीं है, बल्कि इसके अनेक आयाम हैं और भोजन का अभाव निर्धनता मापने का सबसे बुनियादी संकेतक है। केवल आय की कमी ही नहीं, निर्धनता के अनेक आयामों में मानसिक (अशक्तता, निर्भरता आदि), बुनियादी सुविधा (सड़क और उचित परिवहन साधनों का अभाव), जेंडर (परिवार में परिसंपत्तियों का प्रबंधन अधिक आक्रामक जेंडर के हाथ में होना), स्वास्थ्य (अभावों का स्रोत बीमारी) और शिक्षा (शिक्षा का अभाव निर्धनता का आधार और उत्तम शिक्षा निर्धनता से मुक्ति) हैं।

वैश्विक निर्धनता प्राक्कलन की अवधारणा का सूत्रपात 1970 के दशक में हुआ था। वैश्विक रणनीतिकारों ने अत्यंत निर्धन विकासशील देशों की राष्ट्रीय निर्धनता रेखाओं के आधार पर अंतरराष्ट्रीय निर्धनता रेखा का पता लगाने के लिए शोध किया। उन्होंने निर्धनता रेखा को अमेरिकी डॉलर में आंकने और सभी देशों के लिए एक मानक निर्धनता रेखा तय करने के लिए सांकेतिक आधारों के बजाय क्रय शक्ति समानता, विनिमय दरों (पीपीपी) का अधिक उपयोग किया। वैश्विक निर्धनता प्राक्कलन विधियों के बारे में जानकारी का मुख्य स्रोत विश्व बैंक है। 1990 की परिभाषा के अनुसार यदि किसी व्यक्ति की दैनिक आय एक अमेरिकी डॉलर से कम है तो उसे निर्धन माना जाएगा। 2005 में इसमें संशोधन करके 1.25 डॉलर प्रतिदिन प्रति व्यक्ति कर दिया गया और इसके अनुसार विश्व भर में 1.6 अरब लोग गरीबी में जी रहे थे। 2015 में इसे बदलकर 1.90 डॉलर प्रतिदिन प्रति व्यक्ति कर दिया गया। इस तरह मूल मापदंड में 52 प्रतिशत की वृद्धि हुई (ओरटिज-ओसपीना, 2013)।

एमपीआई की अनेक लाभकारी विशेषताओं को समझने के लिए उस प्रेरणा पर ध्यान देना होगा जिसके कारण निर्धनता के आकलन की विधियों में आमूल परिवर्तन हुआ और एमपीआई विकसित किया गया। ऐसे तीन प्रमुख कारण हैं : सांकेतिक तर्क, प्रयोग सिद्ध प्रमाण और नीतिगत दृष्टिकोण (अलकिरे, फोस्टार, सेठ, सांतोस, रॉस और बलोन, जनवरी 2015)। सांकेतिक दृष्टि के तर्क से कहें तो निर्धनता का मार्ग उसकी बहुआयामी प्रकृति के अनुरूप होना चाहिए। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि नीतिगत गणना इस तरह की जाए कि ''मापक विधि और उस प्रक्रिया के बीच संबंध में सुधार हो सके जिसका अनुमान इस मापक से लगाया जाना है।'' इतना ही नहीं अमर्त्य सेन (2000) ने भी यह सिद्ध किया कि मानव जीवन की उत्पीड़ित दशा में विभिन्न तरीकों से सुधार हुआ है फिर भी निर्धनता की विविध वंचनाओं को गणना प्रक्रिया से जोड़ने वाले समग्र फ्रेमवर्क की आवश्यकता जितनी आज है, उतनी पहले कभी नहीं थी।[6] उनका यह भी कहना है कि इसमें कोई संदेह नहीं कि वंचित जीवन अक्सर नगण्य आय का

एमपीआई मापदंड प्रगति डैशबोर्ड

परिणाम संकेतकों की कसौटी पर प्रगति का आकलन

परिणाम होता है, फिर भी उसके कारण रहन-सहन की गरीबी केवल अपर्याप्त आय की देन नहीं है। यदि स्वतंत्रता के साथ न्यूनतम शालीन जीवन निर्धनता से उबारे गए लोगों के संदर्भ में दिलचस्पी का एक प्रमुख क्षेत्र हो सकता है तो यह भी समझना जरूरी है कि दिलचस्पी के इस क्षेत्र का अध्ययन करते समय केवल धन पर अथवा स्वतंत्र शालीन जीवन हासिल करने के किसी एक उपाय पर ध्यान देना अदूरदर्शिता होगी। अत: आवश्यकता केवल 'खाली होते बटुए' के बजाय 'वंचित जीवन' का अध्ययन करने और उसका उद्धार करने की है।[7]

विश्व भर में ऐसे अनेक प्रमुख प्रयोग सिद्ध प्रमाण उभर रहे हैं जो एमपीआई को अपनाने की जबर्दस्त वकालत करते हैं। नोलन एवं व्हीलन (2011) ने देखा कि यूरोप के निर्धनता आकलन में शामिल करने के लिए एमपीआई के समर्थक तीन विशेष कारण रहे; अर्थ, पहचान एवं बहुआयामिता। पहले कारण से उजागर हुआ कि गैर-मौद्रिक आयाम इस बात को सफलतापूर्वक पकड़ते हैं कि निर्धन होने का 'अर्थ' क्या है जिससे गरीबी की समग्र अवधारणा का विस्तार हुआ।[8] दूसरा कारण इस विचार का प्रवर्तक है कि एमपीआई का उपयोग "आय की अधिक उपयुक्त न्यूनतम सीमा" तय करने में सफलतापूर्वक किया जा सकता है जिसके कारण उन निर्धन लोगों को भी अध्ययन के दायरे में लाया जा सकता है जो संसाधनों के अभाव में अपने समाजों में भागीदारी करने में असमर्थ हैं। तीसरा कारण तो स्वत: सिद्ध है क्योंकि निर्धनता बहुआयामी होती है अत: विविध संकेतक अधिक संपूर्ण परिणाम दे सकते हैं।

अंतत: इससे मिलने वाली संख्याएं विश्व में निर्धनता दूर करने के प्रमुख उपायों को वास्तव में अभिप्रेरित कर सकती हैं। निर्धनता दूर करने के प्रमुख उपाय उस दिशा में प्रमुख नीतियों पर अमल करने को प्रेरित कर सकते हैं। वैसे कुछ वंचनाएं अमूर्त और अतुलनीय हैं फिर भी अधूरी नीतियां सफल हो सकती हैं बशर्ते उन्हें सोच-समझकर दृढ़ता के साथ लागू किया जाए।[9]

शोध की प्रक्रिया के निरन्तर विकास के बावजूद निर्धनता की अधिक स्पष्ट तस्वीर की आवश्यकता बनी रही। शुरुआती तरीकों को लेकर जो प्रमुख सवाल उठे वह यह थे कि गरीबी की रेखा में होने वाले वार्षिक मूल्य समायोजन आमतौर पर अपर्याप्त होते हैं और निर्धनता की वास्तविक स्थिति का सामान्य से कम अनुमान देते हैं। आय/कैलोरी आधारित विधियों की आलोचना में एक तर्क यह भी दिया जाता है कि न्यूनतम कैलोरी खपत होने का सीधा अर्थ यह नहीं है कि व्यक्ति की खुराक में पूरा पोषण संतुलन है। आवश्यक गैर-आहार मदों जैसे किराया, ईंधन, प्रकाश, वस्त्र, स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा और परिवहन पर होने वाले खर्च का अनुमान अक्सर वास्तविकता से बहुत कम होता है या कोई हिसाब ही नहीं होता।

एचडीआई का विकास गरीबी का लाक्षणिक आकलन करने के तरीकों पर दशकों के शोध और बहुपक्षीय परिचर्चाओं की देन था। 1990 में मानव विकास सूचकांक यानी एचडीआई की अवधारणा यूएनडीपी ने तैयार की और उसे सबके सामने पेश किया। इसने आय के मापदंड का प्रयोग किए बिना निर्धनता की माप का एक वैकल्पिक तरीका अपनाकर निर्धनता कम करने के बारे में अभिनव सोच को बढ़ावा दिया। यह तीन बुनियादी पहलुओं : स्वस्थ जीवन, शिक्षा की सुलभता और रहन-सहन का स्तर- में देश की औसत उपलब्धियों को मानता है। एचडीआई निर्धनता मापने के क्षेत्र में एक जबर्दस्त सफलता साबित हुआ और इसके परिणामस्वरूप विभिन्न देशों की आपस में तुलना होने लगी। 2010 में जारी बहुआयामी निर्धनता सूचकांक (एमपीआई) वास्तव में

यदि स्वतंत्रता के साथ न्यूनतम शालीन जीवन निर्धनता से उबारे गए लोगों के संदर्भ में दिलचस्पी का एक प्रमुख क्षेत्र हो सकता है तो यह भी समझना जरूरी है कि दिलचस्पी के इस क्षेत्र का अध्ययन करते समय केवल धन पर अथवा स्वतंत्र शालीन जीवन हासिल करने के किसी एक उपाय पर ध्यान देना अदूरदर्शिता होगी। अत: आवश्यकता केवल 'खाली होते बटुए' के बजाय 'वंचित जीवन' का अध्ययन करने और उसका उद्धार करने की है।

एचडीआई का संशोधित और संकेन्द्रित रूप था (अलकिरे एस.ए., 2010)।

भारत की स्थिति

दशकों के शोध से यह सिद्ध हो गया है कि निर्धनता का माप केवल आय के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए। निर्धनता मापने पर केन्द्रित अनेक शोध प्रस्तुत किए गए हैं। जैसे (मेहता) भारत में निपट निर्धनता की बात करते हैं, (बनर्जी, टू पॉवर्टीज, 2000 जिसमें निर्धनता को हताशा और लाचारी बताया गया है, (एन, 2013 जो निर्धनता अपशमन की बात करता है।

निर्धनता के लिए माप ढांचे की बुनियाद अमर्त्य सेन के मौलिक शोध में पड़ गई थी (सेन ए, 2005, पृष्ठ 275-296)। उनका तर्क था कि गरीबी को ऐसी परिस्थिति के रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए जो लोगों को चुनने की स्वतंत्रता से वंचित करती है और समाज में कारगर ढंग से काम करने से उन्हें रोकती है। व्यक्ति मात्र के लिए सुविधाओं और अवसरों का यह अभाव उसे अपनी प्रतिभा और क्षमताओं के पूर्ण विकास से रोकता है। निर्धनता का इस तरह का विश्लेषण 'साधन' (आय) के बजाय 'साध्य' (भरपूर जीवन जीने की स्वतंत्रता) पर ध्यान केन्द्रित करता है। क्षमता की वंचना का यह दृष्टिकोण केवल निम्न आय पर नहीं, बल्कि स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी बेहद महत्वपूर्ण वंचनाओं पर ध्यान देता है। क्षमता वंचना के निम्न आय के अलावा अन्य कई कारण हैं और निम्न आय तथा निम्न क्षमता के बीच संबंध विभिन्न समुदायों और व्यक्तियों के बीच भिन्न-भिन्न होते हैं। अतः निर्धनता की बहुआयामी प्रकृति को हमेशा ध्यान में रखना जरूरी है। निर्धनता मापने पर भारत के नीति निर्धारकों ने बहुत लंबे समय से ध्यान दिया है। 1950 में बीएस मिनहास (नागराज 1990) ने प्रति वर्ष वार्षिक व्यय पर आधारित निर्धनता रेखा का उपयोग करते हुए स्वतंत्र भारत के लिए निर्धनता दरों का पहला अनुमान प्रकाशित किया। 1952 में प्रथम राष्ट्रीय परिदर्श सर्वेक्षण (एनएसएस) (तेंदुलकर, 2003) का निष्कर्ष था कि भारत की कुल जनसंख्या में निर्धनता का अनुपात लगभग 45 प्रतिशत है। 1971 में वी एम दांडेकर और नीलकंठ रथ (गिलबर्ट 1971) ने भारत में निर्धनता रेखा निर्धारण के लिए प्रति व्यक्ति 2250 कैलोरी की दैनिक खपत को आधार माना। 1993 में डीटी लकड़ावाला (अरोड़ा, 2017) की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ दल ने भारत के लिए निर्धनता रेखा निर्धारित की। पहली बार जींसों और मूल्यों की एक मानक सूची के आधार पर राज्यों की निर्धनता रेखाएं विकसित की गई। सन् 2000 में सक्सेना समिति रिपोर्ट (कमेटी एस 2010) में 1972 से 2000 तक के आंकड़ों के सहारे भारत में गरीबी विश्लेषण में कैलोरी खपत को सांकेतिक आय से अलग किया गया और अनुमान लगाया गया कि 50 प्रतिशत भारतीय निर्धनता रेखा से नीचे जी रहे थे। 2010 में सुरेश तेंदुलकर समिति (कमेटी टी, 2009) ने निर्धनता रेखा की गणना प्रति माह प्रति व्यक्ति खपत व्यय के आधार पर की। ग्रामीण क्षेत्रों के लिए यह रुपये 816 प्रति माह (रु. 27 प्रतिदिन) और शहरी क्षेत्रों में रुपये 1000 प्रतिमाह (रुपये 33 प्रतिदिन) था। इस विधि के आधार पर निर्धनता रेखा से नीचे की जनसंख्या 35.4 करोड़ (जनसंख्या) का 29.6 प्रतिशत) थी।

एमपीआई की अनेक लाभकारी विशेषताओं को समझने के लिए उस प्रेरणा पर ध्यान देना होगा जिसके कारण निर्धनता के आकलन की विधियों में आमूल परिवर्तन हुआ और एमपीआई विकसित किया गया।

रंगराजन समिति (कमेटी आर, 2014) ने ग्रामीण क्षेत्रों के लिए रुपये 972 प्रति माह या रुपये 32 प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्रों के लिए रुपये 1407 प्रति माह या रुपये 47 प्रतिदिन की निर्धनता रेखा तय की। इस विधि के अनुसार 2011-12 में 36.3 करोड़ (जनसंख्या का 29.5 प्रतिशत) जनसंख्या निर्धनता रेखा से नीचे थी।

निर्धनता का समग्र आकलन करने के लिए एमपीआई अपनाने वाले सभी देशों में सबसे अधिक लाभ भारत को हुआ है।

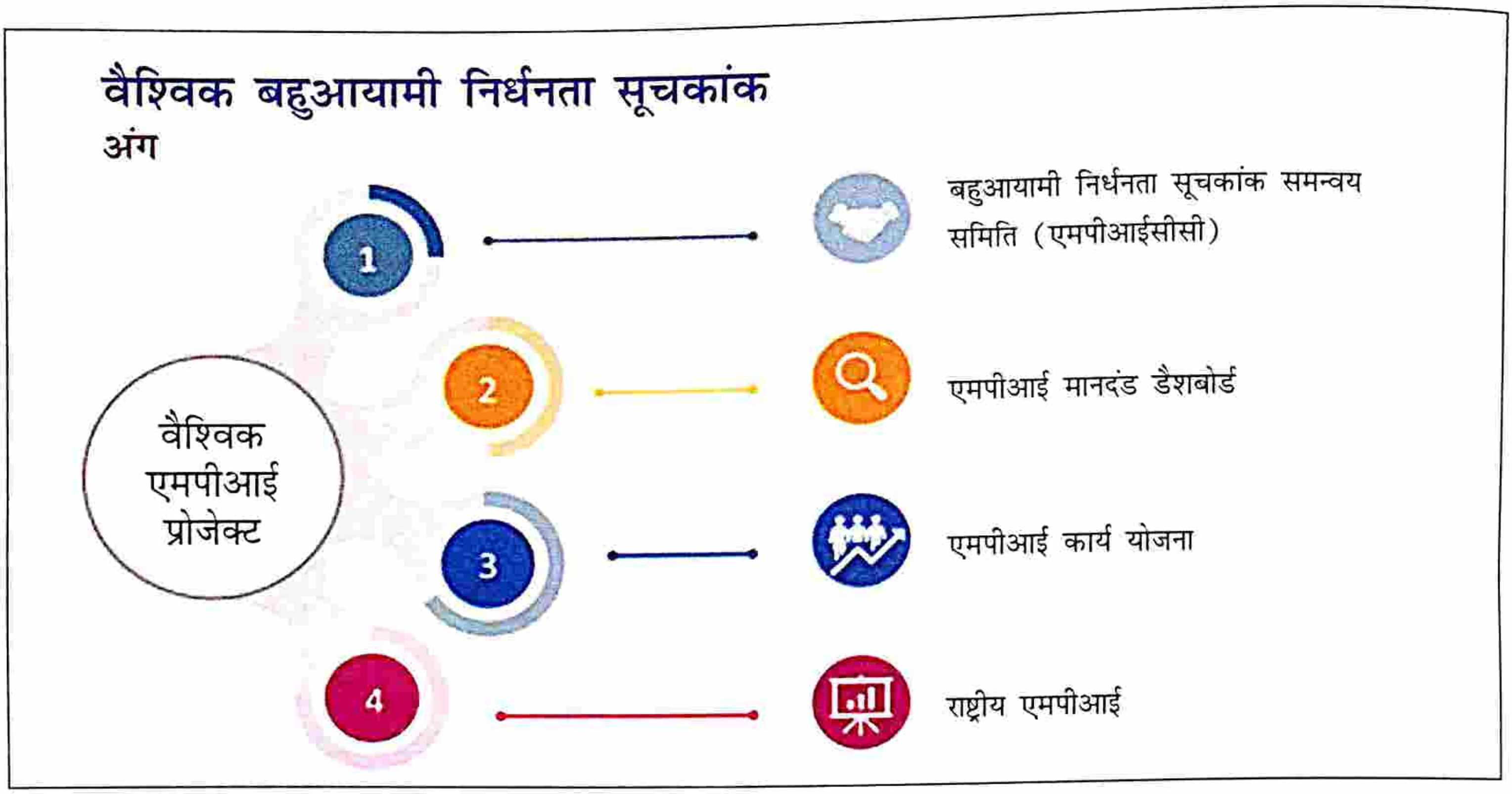

इसका प्रमाण यही है कि निम्न-मध्यम आय श्रेणी के देश भारत में एमपीआई के अनुसार सितम्बर, 2019 तक की सूचना के अनुसार निर्धनता में सबसे तेजी से गिरावट दर्ज की गई है। 2005-06 से 2015-16 तक के दशक में भारत में 27.1 करोड़ लोगों को बहुआयामी निर्धनता से उबारा। अधिक गर्व और संतोष देने वाला आंकड़ा यह है कि इनमें से सबसे अधिक गिरावट की सूचना भारत के कुछ सबसे निर्धन क्षेत्रों से मिली है। इसका एक प्रमुख उदाहरण झारखंड राज्य है, जहां एमपीआई 2005-06 में 74.9 प्रतिशत था और 2015-16 में घटकर 46.5 प्रतिशत रह गया। विश्व भर में बहुआयामी निर्धनता से त्रस्त जनसंख्या 1.3 अरब[10] है जिसे देखते हुए यह आंकड़ा वरदान जैसा लगता है और गरीबी के संकेतकों में कमी लाने में लोगों की समग्र सहायता करने तथा उसका अनुमान लगाने का स्वागत योग्य संकेत है।

पिछले एक दशक में एमपीआई की सफलता के उदाहरण देने के मामले में दक्षिण एशिया सबसे आगे है। भारत के अलावा उसी दशक में कम्बोडिया में एमपीआई में सबसे तेजी से गिरावट आई। बांग्लादेश ने भी 2004-2014 में 1.9 करोड़ लोगों को बहुआयामी निर्धनता से उबारने में सफलता पाई। भारत में एमपीआई का अनुपात 2005-06 में 0.283 से घटते-घटते 2015-16 में 0.123 रह गया। इससे सिद्ध होता है कि निर्धनतम क्षेत्रों से लोगों को उबारा जाना अन्य देशों के लिए अनुकरणीय उदाहरण हो सकता है। कुल मिलाकर इथियोपिया, भारत और पेरू ने सभी 10 संकेतकों में वंचनाओं में उल्लेखनीय कमी हासिल की है। यह वंचनाएं हैं : पोषाहार, स्वच्छता, बाल मृत्यु, पेयजल, स्कूल में पढ़ाई के वर्ष, बिजली, स्कूल उपस्थिति, आवास, रसोई ईंधन और परिसंपत्तियां।[11]

किन्तु परम संख्याओं की दृष्टि से भारत के कंधों पर अब भी अपने लगभग 36.9 करोड़ लोगों को बहुआयामी निर्धनता से मुक्ति दिलाने का बोझ है। यह विशेष रूप से दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों की तुलना में अब भी बहुत बड़ा अनुपात है। दक्षिण अफ्रीका में एमपीआई निर्धन जनसंख्या 2001 में 17.9 प्रतिशत से घटकर 2016 में 7 प्रतिशत रह गई। इसका सीधा सा मतलब करीब 40 लाख नागरिक हैं जो भारत में आज कुल एमपीआई निर्धन जनसंख्या का 1.08 प्रतिशत है।

अतः यह रिपोर्ट इस क्षेत्र में कार्यरत विभिन्न शोधकर्ताओं द्वारा स्थापित बुनियाद पर तैयार हुई है और हम आशा करते हैं कि उनके विचारों का दायरा और बढ़ाने में सहायक होगी। महत्वपूर्ण बात यह पहचानने की है कि "कोई पीछे छूटने न पाए" का सहस्राब्दि विकास लक्ष्य हासिल करने के लिए हमें अपनी नीतियों और मापन तकनीकों को यथासंभव छोटे से छोटे स्तर पर स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप ढालना होगा। यह रिपोर्ट भारतीय संदर्भ के लिए एक पथ प्रदर्शक प्रयास है। ■

संदर्भ

1. How to Explain the Measurement of Multidimensional Poverty to the General Public: Workshop for Journalists in Colombia (January 2019)
2. https://ophi.org.uk/ophi_stories/seminar-on-mpi-its-impact-on-social-policy-in-colombia/
3. Alkire, S., Foster, J. E., Seth, S., Santos, M. E., Roche, J. M., and Ballon, P. (2015). Multidimensional Poverty Measurement and Analysis, Oxford: Oxford University Press, ch. 1.
4. Narayan, D., Chambers, R., Shah, M. K., and P. Petesch. (2000). Voices of the Poor: Crying Out for Change. OUP.
5. Alkire, S., Foster, J. E., Seth, S., Santos, M. E., Roche, J. M., and Ballon, P. (2015). Multidimensional Poverty Measurement and Analysis, Oxford: Oxford University Press, ch. 1.
6. Sen, A.K. (2000).' A Decade of Human Development'. Journal of Human Development and Capabilities, 1(1):17– 23.
7. Sen, A.K. (2000). Social Exclusion: Concept, Application and Scrutiny, ADB, ch. 2.
8. Nolan, B. and Whelan, C. (2011). Poverty and Deprivation in Europe. OUP.
9. Székely, M. (ed.). (2005). Números que mueven al mundo: La medición de la pobrezaen México. Miguel ÁngelPorrúa
10. https://www.thehindubusinessline.com/economy/india-lifted-271-million-people-out-of-poverty-in-10-years- un/article28403303.ece
11. https://www.thehindubusinessline.com/economy/india-lifted-271-million-people-out-of-poverty-in-10-years-un/article28403303.ece

भाषाई विविधता की चुनौती

एस चंद्रशेखर
लीना भट्टाचार्य

प्रवासी मजदूर भारतीय शहरों की कामकाजी गतिविधियों में अहम भूमिका निभाते हैं। अगर हम 2011 में हुई देश की जनगणना के आधार पर पलायन और भाषा के आंकड़ों पर नजर डालें, तो पता चलता है कि अंतर-राज्यीय पलायन की वजह से भारतीय शहरों की आबादी की संरचना में बड़े पैमाने पर बदलाव आया है। ऐसे में अंतर-राज्यीय प्रवासियों के लिए भाषा की समस्या खड़ी हो गई है, जिस पर ठीक से ध्यान नहीं दिया गया है

पलायन की वजह से भाषाई विविधता बढ़ रही है। विशेष तौर पर मातृभाषाओं के आंकड़ों में ऐसा देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए हम महाराष्ट्र की बात करते हैं। आबादी के हिसाब से इस दूसरे सबसे बड़े राज्य की आधिकारिक भाषा मराठी है। महाराष्ट्र में बड़ी संख्या में अलग-अलग राज्यों से लोग पहुंचते हैं और मातृभाषा के लिहाज से आबादी का बंटवारा इस तथ्य की पुष्टि करता है। 1971 में राज्य की 76 प्रतिशत आबादी ने अपनी मातृभाषा मराठी बताई थी, जबकि चार दशक बाद यानी 2011 में राज्य में मराठी भाषी (जिनकी मातृभाषा मराठी थी) आबादी की संख्या घटकर 69 प्रतिशत हो गई। एक अनुमान के मुताबिक, 2011-21 के दशक में राज्य में ऐसे लोगों की संख्या और कम हो सकती है, जिनकी मातृभाषा मराठी होगी। साल 2011 में महाराष्ट्र में दो अजनबी लोगों के मिलने पर मातृभाषा में ही बातचीत की संभावना 0.5 थी। इसका क्या मतलब है? दरअसल, इससे पता चलता है कि अगर महाराष्ट्र में दो अजनबी लोगों के बीच बातचीत होती है, तो इस बात की 50 प्रतिशत ही संभावना होगी कि उनकी मातृभाषा एक ही हो।

आम तौर पर, राज्य के शहरी इलाकों के मुकाबले ग्रामीण इलाकों में इस बात की संभावना ज्यादा होती है कि दो लोगों की मातृभाषा एक ही हो। इसमें हैरानी की बात नहीं है, क्योंकि शहरी इलाकों में बड़ी संख्या में राज्य के बाहर के लोग पहुंचते हैं। किसी क्षेत्र की भाषाई विविधता में राज्य के बाहर के लोगों की भूमिका होती है। ऐसे में जाहिर तौर पर शहरों की भाषाई विविधता राज्य के मुकाबले ज्यादा होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में

लेखक इंदिरा गांधी शोध विकास संस्थान, मुंबई में प्रोफेसर हैं। ईमेलः chandra@igidr.ac.in
लेखिका इंदिरा गांधी शोध विकास संस्थान, मुंबई में रिसर्च स्कॉलर हैं।

कहें तो किसी राज्य में शहरों के मुकाबले बाकी हिस्सों में इस बात की संभावना कम रहती है कि दो लोग अपनी मातृभाषा में बात करें। देश के बड़े शहरों में इससे जुड़ी संभावनाएं अलग-अलग हो सकती हैं। आंकड़ों के मुताबिक, मुंबई में दो लोगों के अपनी मातृभाषा में बात करने की संभावना काफी कम यानी 0.24 है, जबकि बेंगलुरु में इसकी संभावना 0.26 है। इससे इन शहरों में मातृभाषाओं में विविधता का पता चलता है। कुछ और शहरों में यह आंकड़ा कुछ इस तरह है: सूरत में 0.4, हैदराबाद में 0.38, कोलकाता में 0.45, अहमदाबाद में 0.59 और चेन्नई में 0.63।

आम तौर पर शहरों में मौजूद भाषाई विविधता पर संबंधित राज्य सरकारें ध्यान नहीं देती हैं। फर्ज कीजिए कि किसी दूसरे राज्य से आया प्रवासी मुंबई में काम करता है और मराठी नहीं जानता है या चेन्नई में रहने वाला ऐसा ही शख्स तमिल नहीं जानता है। देश के राज्यों में ज्यादातर कागजी काम वहां की आधिकारिक भाषा या अंग्रेजी भाषा में होते हैं। लिहाजा, राज्य की आधिकारिक भाषा की जानकारी नहीं रखने वाले प्रवासियों को कागजी कामकाज में दिक्कत होती है।

उदाहरण के लिए, निर्माण क्षेत्र में 90 दिनों तक काम करने वाले प्रवासी, भवन और अन्य निर्माण से जुड़े के श्रमिकों को लेकर बने कानून (बीओसीडब्ल्यू) के तहत पंजीकरण करा सकते हैं। रजिस्ट्रेशन कराने वाले श्रमिक सामाजिक सुरक्षा लाभ के हकदार होते हैं। उन्हें स्वास्थ्य और दुर्घटना बीमा के साथ-साथ शिक्षा के लिए वित्तीय सहायता भी मिलती है। उदाहरण के लिए, हम महाराष्ट्र की बात करते हैं। दरअसल, महाराष्ट्र बीओसीडब्ल्यू कल्याण बोर्ड की वेबसाइट पर मौजूद जानकारी मराठी और अंग्रेजी भाषाओं में है। यहां सवाल यह है कि क्या रजिस्ट्रेशन और सुविधाओं का लाभ उठाने के मामले में भाषा बाधा बन सकती है? शायद, हां, क्योंकि बड़ी संख्या में प्रवासी मराठी बोल या पढ़ नहीं सकते। महाराष्ट्र बीओसीडब्ल्यू कल्याण बोर्ड की वेबसाइट पर अंतर-राज्यीय प्रवासी मजदूरों के बारे में कुछ बुनियादी जानकारी दी गई है। इसके मुताबिक, तकरीब 54 प्रतिशत मजदूर उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल से हैं (रेखाचित्र 1)। आप कल्पना कर सकते हैं कि बिहार, उत्तर प्रदेश या पश्चिम बंगाल का कोई श्रमिक (महज साक्षर) बीओसीडब्ल्यू के रजिस्ट्रेशन के लिए कैसे जरूरी फॉर्म भर पाएगा। दरअसल, उसे न तो मराठी और न ही अंग्रेजी की जानकारी होती है। साथ ही, अलग-अलग जगहों और अलग-अलग उद्योगों से जुड़े श्रमिकों के लिए भी इसी तरह की दिक्कत हो सकती है। हम सिर्फ उदाहरण के तौर पर महाराष्ट्र का मामला पेश कर रहे हैं। बाकी राज्यों के मामले में भी यह सच हो सकता है।

भारतीय भाषाओं में तकनीकी सुविधाएं उपलब्ध होने की वजह से किसी भी भाषा में भरे गए फॉर्म का पसंद की भाषा में तुरंत अनुवाद हो सकता है। दरअसल, इसका मकसद यह है कि बेशक किसी राज्य में सभी सरकारी कामकाज कई भाषाओं में हों, लेकिन दूसरी भाषा जानने वाले लोगों को भी किसी तकनीकी सहायता के जरिये जरूरी सुविधाएं उपलब्ध कराई जा सकें। इस तरह की समावेशी नीति से भाषा की बाधा को दूर किया जा सकेगा और आंतरिक पलायन की गैर-मौद्रिक लागत को कम किया जा सकेगा। साथ ही, देश के संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल सभी भाषाओं में कागजी और दस्तावेजी कार्रवाई की सुविधा दी जानी चाहिए। संविधान की आठवीं अनुसूची में कुल 22 भाषाएं हैं। हालांकि, अनुसूची में शामिल किए जाने से इन भाषाओं को कोई खास फायदा नहीं हुआ। बहरहाल, इन भाषाओं से जुड़े लोगों को मनोवैज्ञानिक सुरक्षा और पहचान जरूरी मिली।

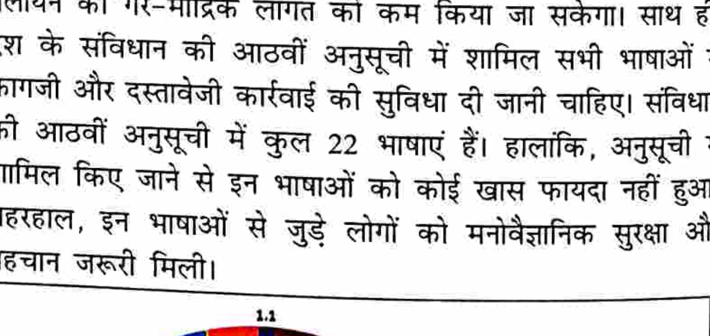

स्रोत: *https://mahabocw.in/migrant-workers-dashboard/*

रेखाचित्र 1: महाराष्ट्र बीओसीडब्ल्यू कल्याण बोर्ड के साथ पंजीकृत अंतर-राज्यीय श्रमिकों की राज्यवार स्थिति

अगर हम राज्यों की बात करें, तो भाषाई विविधता को लेकर पश्चिम बंगाल संवेदनशीलता जान पड़ता है। पश्चिम बंगाल आधिकारिक भाषा (दूसरा संशोधन) कानून 2012 की धारा 3बी के तहत ''नियम-कानून में उर्दू, हिंदी, संथाली, ओडिया और पंजाबी भाषाओं के इस्तेमाल'' की अनुमति दी गई है। यह प्रावधान राज्य के उन सभी जिलों, तहसील या ब्लॉक पर लागू होता है, जहां उर्दू, हिंदी, संथाली, ओडिया और पंजाबी बोलने वाले लोगों की संख्या जिले, तहसील या ब्लॉक की कुल आबादी के 10 प्रतिशत से ज्यादा है। इससे यह सुनिश्चित हो सकेगा कि सरकार के सभी नियम, अधिसूचनाएं, सरकारी विज्ञापन और अहम दिशा-संकेतक कई भाषाओं में उपलब्ध होंगे। इस बात की जानकारी कम लोगों को है कि बाकी राज्यों के मुकाबले पश्चिम बंगाल में आधिकारिक भाषाओं की संख्या सबसे ज्यादा है।

बेशक कुछ राज्यों ने भाषाई विविधता को लेकर पहल की है, लेकिन इस मामले में न्यायपालिका में संभावनाएं बेहद सीमित हैं। संविधान के अनुच्छेद 348 (1) के मुताबिक, सुप्रीम कोर्ट और हाई कोर्ट की कार्यवाही अंग्रेजी में चलने की बात है। अदालती फैसलों के सिर्फ अंग्रेजी में उपलब्ध होने की वजह से होने वाली दिक्कतों को देखते हुए सुप्रीम कोर्ट ने भी हाल के वर्षों में पहल की है। सुप्रीम कोर्ट ने 2019 में 100 अहम फैसलों का अनुवाद क्षेत्रीय भाषाओं में करवाया, ताकि अंग्रेजी नहीं जानने वाले लोगों को भी इसका फायदा मिल सके। क्षेत्रीय भाषाओं में फैसलों का अनुवाद भारतीय अदालतों में अंग्रेजी के एकमात्र विकल्प को चुनौती देता है। इन फैसलों का अनुवाद बेहद अहम है, क्योंकि सुप्रीम कोर्ट ने एक देश, एक राशन और बीओसीडब्ल्यू कानून के प्रभावी क्रियान्वयन को लेकर अहम आदेश जारी किए हैं।

सिर्फ प्रवासी मजदूरों, बल्कि उनके बच्चों को भी भाषा की दिक्कत का सामना करना पड़ सकता है। आम तौर पर, राज्य की आधिकारिक भाषा में ही सरकारी स्कूलों में पढ़ाई होती है। भाषा संबंधी समस्या की वजह से बच्चों को स्कूलों में दिक्कत हो सकती है। शिक्षा का माध्यम अलग भाषा में होने की वजह से प्रवासियों के बच्चों को परेशानी झेलनी होगी। उदाहरण के लिए, अगर झारखंड या बिहार का कोई बच्चा तमिलनाडु या कर्नाटक या महाराष्ट्र के किसी सरकारी स्कूल में पढ़ने जाएगा, तो उसे काफी दिक्कतों का सामना करना पड़ेगा। एक और जटिलता यह है कि हाल के वर्षों में कुछ राज्यों के सरकारी और निजी स्कूलों ने अपनी आधिकारिक भाषा को अनिवार्य विषय बना दिया है। यह नीति प्रवासी बच्चों के लिए बड़ी परेशानी है। अमीर-गरीब सभी तबके के बच्चों पर इसका असर पड़ता है। भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 के मुताबिक, ऐसे बच्चों के स्कूल छोड़ने की दर ज्यादा होती है। हालांकि, मुफ्त और अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम, 2009 में विशेष प्रावधान भी किए गए हैं, ताकि बच्चों के बीच में स्कूल छोड़ने की दर को कम किया जा सके। इसके बावजूद प्रवासी बच्चों के लिए इस तरह की दिक्कतें मौजूद हैं। बीच में ही स्कूल छोड़ने वाले प्रवासी मजदूरों के बच्चों के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में वैकल्पिक और नवाचारी शिक्षा केंद्र बनाने की बात कही गई है। इसके लिए प्रवासियों से जुड़े मूल राज्य सरकारों और उनके नए ठिकाने वाले राज्यों को मिलकर काम करने की जरूरत है, ताकि उचित भाषा में किताबें उपलब्ध कराई जा सकें। सिविल सोसायटी संगठन ऐसे कार्यकर्ताओं का इंतजाम करने को लेकर सक्रिय हैं जो प्रवासी मजदूरों के बच्चों को उनकी मातृभाषा में पढ़ाते हैं।

यह भी देखने को मिल रहा है कि ग्रामीण और शहरी, दोनों इलाकों में बच्चों को अंग्रेजी माध्यम स्कूलों में दाखिला दिलाने का प्रचलन बढ़ रहा है। शिक्षा को लेकर राष्ट्रीय सैंपल सर्वे के सर्वेक्षण में यह रुझान साफ तौर पर देखा जा सकता है। 2007-08 से 2017-18 के दौरान के सर्वे में इस बदलाव की झलक देखने को मिलती है। अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में दाखिला लेने वाले बच्चों के लिए इस तरह की चुनौतियों से निपटना आसान होता है। हालिया घटनाक्रमों से पता चलता है कि उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश समेत कई राज्य सरकारों ने नई वास्तविकताओं को समझते हुए कई सरकारी स्कूलों में शिक्षा के माध्यम के तौर पर अंग्रेजी को लागू करने की कोशिश की है। आठवें अखिल भारतीय स्कूली शिक्षा सर्वे के आंकड़ों के मुताबिक, दो या ज्यादा भाषाओं में पढ़ाई मुहैया कराने वाले स्कूलों की संख्या में बढ़ोतरी हुई है। आज के दौर में 6-14 साल और 15-29 साल के आयु वर्ग में क्रमशः 34 और 41 प्रतिशत लोग द्विभाषी हैं। सभी तथ्यों पर विचार करने के बाद कहा जा सकता है कि बहुभाषी भारत में हिंदी और अंग्रेजी संपर्क भाषा के तौर पर उभर सकती है। ■

कैबिनेट के फैसले जुलाई 2020

Ministry of Human Resource Development
Government of India

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 की खास बातें

समान और समावेशी शिक्षा: सबके लिए शिक्षा

सामाजिक आर्थिक रूप से पिछड़े समूहों पर फोकस। मोटे तौर पर इसका वर्गीकरण इस तरह से किया जा सकता है:

- लैंगिक पहचान के आधार पर (खास तौर पर महिला और किन्नर)
- सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान के आधार पर (अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ी जाति और अल्पसंख्यक)
- भौगोलिक पहचान के आधार पर (गांव, छोटे शहरों और संभावनाशील जिलों के छात्र-छात्राएं)
- दिव्यांगता (सीखने संबंधी अक्षमता) के आधार पर
- सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के आधार पर (जैसे कि प्रवासी समुदाय, कम आय वाले परिवार, वंचित बच्चे, मानव तस्करी, देह व्यापार आदि की पीड़िताएं और उनके बच्चे, अनाथ जिनमें शहरी इलाकों के गरीब और भिखारी बच्चे भी शामिल हैं)

संदर्भ

1. लीना भट्टाचार्य और एस. चंद्रशेखर (2019), http://www.igidr.ac.in/pdf/publication/WP-2020-015.pdf

दिव्यांगजनों के लिए नीतियां

दीपा पलनीअप्पन

राष्ट्र नीति को दिव्यांगता के सामाजिक मॉडल के अनुरूप परिवर्तित करना, 'दिव्यांगता-समावेशी समाज' के निर्माण का एक नया तरीका है। दिव्यांग-समावेशी समाज में राष्ट्र नीतियां न केवल दिव्यांगजन के अनुकूल होती हैं, बल्कि ये मानव भिन्नताओं के समूचे वर्णक्रम के प्रति हमेशा संवेदनशील रहते हुए, सभी वैयक्तिक भिन्नताओं का स्वागत करती हैं। इस लेख में समकालीन नीति परिदृश्य और वास्तव में समावेशी समाज की ओर अग्रसर होने के तरीके पर प्रकाश डाला गया है।

दिव्यांगजन को ऐतिहासिक रूप से दया, उपहास या दान के पात्र के रूप में देखा गया है। उदाहरण के लिए, हमारे देश में किसी बच्चे का दिव्यांगता के साथ जन्म लेना या किसी मां का दिव्यांग बच्चे को जन्म देना, उसके बुरे कर्मों और पूर्व जन्म के पापों का परिणाम माना जाता था। पिछले कुछ दशकों में, दिव्यांगता के प्रति इस दृष्टिकोण में काफी बदलाव आया है। वर्तमान में हम एक ऐसे ऐतिहासिक परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं, जहां सामाजिक नीतियां दिव्यांगता की अधिकार-आधारित समझ के अनुरूप बन रही हैं और इस दिशा में किए जा रहे प्रयास धीरे-धीरे दान या दया की वजाय अधिकार केंद्रित हो रहे हैं।

समुदाय-आधारित सामाजिक आंदोलनों की समकालीन प्रवृत्ति, शायद दिव्यांगता को समझने के लिए एक सहज समझ का नतीजा है जिसके तहत दिव्यांगता को अधिकारों से संबद्ध कर देखा जाता है। फिर भी, दिव्यांगता को अधिकारों के संदर्भ में समझना इतना सहज नहीं है जितना कि पहली नजर में लगता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो दान, दया, विद्रोह और भय की परतों के नीचे छिपी हमारी गलत धारणाओं और मनोवृत्ति संबंधी बाधाओं को अस्थिर और उजागर करेगी।

सैद्धांतिक मॉडल, वर्गीकरण योजनाओं और यहां तक कि माप के विभिन्न रूपों के माध्यम से दिव्यांगता को समझने के कई प्रयास किए गए हैं। दिव्यांगता को कैसे समझा जाता है इसका नीतिगत पहलों, परिस्थितिगत उपायों और यहां तक कि सामान्य रूप से लोगों के नजरिए पर तत्काल प्रभाव पड़ता है। दिव्यांगता विशेषज्ञों ने इस बारे में उपाय शुरू करने से पहले लगातार सही अर्थों में दिव्यांगता को समझने की आवश्यकता पर जोर दिया है।

सामाजिक मॉडल बनाम चिकित्सा मॉडल

दिव्यांगता के बारे में लेखों में, मॉडल का उपयोग करके दिव्यांगता के दृष्टिकोण का वर्णन करना एक आम बात है, सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला दृष्टिकोण सामाजिक मॉडल बनाम चिकित्सा मॉडल विशिष्टता है। दिव्यांगता का चिकित्सकीय दृष्टिकोण 1900 के दशक की शुरुआत से दिव्यांगता की व्याख्या करने का प्रभावशाली तरीका रहा है। इसमें शारीरिक असामान्यताओं और इसके कारण होने वाली शिथिलता पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। इसे व्यक्तिगत त्रासदियों के मॉडल के रूप में संदर्भित किया जाता है, क्योंकि व्यक्ति को एक पीड़ित और किसी ऐसे व्यक्ति के रूप में देखा जाता है जिसे हमेशा 'देखभाल' की आवश्यकता है और वह पूरी तरह से दूसरों पर निर्भर है।

दिव्यांगता के चिकित्सा मॉडल को दिव्यांगता के लिए एक वैयक्तिक त्रासदी दृष्टिकोण के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है, जहां किसी व्यक्ति की दिव्यांगता और सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक जीवन में भाग लेने की सीमाओं को दुखद लेकिन उसकी स्वयं की शारीरिक दुर्बलता के अपरिहार्य परिणाम के रूप में देखा जाता है। दिव्यांगता को व्यक्तिगत शारीरिक अवहेलना के रूप में समझा जाता है और दिव्यांग व्यक्तियों को अक्षमताओं या अक्षमता वाले

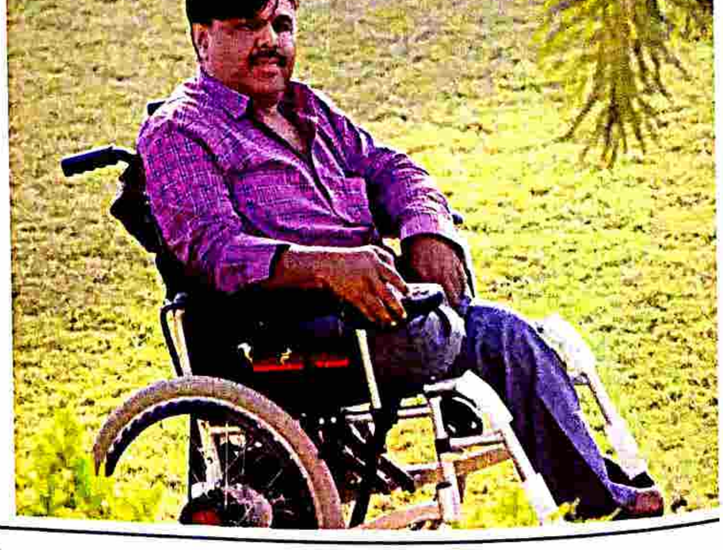

लेखिका बिहार राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन की सलाहकार हैं। ईमेल: deepa.palaniappan@gmail.com

और असामान्य लोगों के रूप में देखा जाता है। वास्तव में दिव्यांगता के प्रति यह नीतिगत ढांचे में और इससे जुड़े प्रबुद्ध समाज में भी प्रचलित रहा है।

दिव्यांगों के अधिकारों के लिए काम करने वाले स्वयंसेवी और विशेषज्ञ दिव्यांगता के चिकित्सा मॉडल की आलोचना करते रहे हैं और दिव्यांगता को एक व्यक्तिगत त्रासदी के रूप में देखने के खिलाफ चिंता व्यक्त करते रहे हैं। चिकित्सा मॉडल की यह आलोचना, शारीरिक सीमा से हटकर सामाजिक भेदभाव पर ध्यान केंद्रित करती है। इसे दिव्यांगता के सामाजिक मॉडल के रूप में परिभाषित किया गया है।

दिव्यांगता को व्यक्तिगत शारीरिक अवहेलना के रूप में समझा जाता है, और दिव्यांग व्यक्तियों को अक्षमताओं वाले और असामान्य लोगों के रूप में देखा जाता है। वास्तव में दिव्यांगता के प्रति यह नीतिगत ढांचे में और इससे जुड़े प्रबुद्ध समाज में भी प्रचलित रहा है।

नीति प्रचलन में बदलाव

दिव्यांगता के सामाजिक मॉडल ने, दिव्यांगता के प्रति न केवल समाज बल्कि दिव्यांगजनों के स्वयं के दृष्टिकोण में बड़ा बदलाव लाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वास्तव में दृष्टिकोण में आया यह बदलाव विश्व स्तर पर दिव्यांगता से संबंधित नीतियों और कार्य प्रणाली के लिए एक महत्वपूर्ण चरण है, क्योंकि दिव्यांगजन के अधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र संधि में दिव्यांगता के सामाजिक मॉडल पर बने चिकित्सा मॉडल की इस आलोचना की प्रशंसा की गई है, जिसे दिव्यांगों के अधिकारों की पैरवी करने वाले माइक ओलिवर (1983) जैसे विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। जहां समाज और बाधाओं को किसी व्यक्ति के शरीर या सीमाओं के बजाय दिव्यांगता के रूप में देखा जाता था। यह दृष्टिकोण दिव्यांगता का कारण बाहरी बाधाओं (बाह्य या पर्यावरणीय या सांस्कृतिक) के रूप में देखता है और इसका शारीरिक सीमाओं के साथ बहुत कम संबंध है। दिव्यांगता में यह वर्तमान वैश्विक नीति प्रचलन है और इसलिए इस संदर्भ को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना महत्वपूर्ण है।

वैश्विक कार्रवाई

दिव्यांगता पर अंतरराष्ट्रीय कार्रवाई को 1981 में दिव्यांगों के अंतरराष्ट्रीय वर्ष और बाद में 1983 से, दिव्यांगों के अंतरराष्ट्रीय दशक की घोषणा के माध्यम से बढ़ावा दिया गया था। यह भारत में दिव्यांगजन के लिए नीति के अंतरराष्ट्रीयकरण की दृष्टि से ऐतिहासिक था और अंतरराष्ट्रीय दिव्यांग वर्ष तथा अंतरराष्ट्रीय दशक का तत्काल प्रभाव भारत सहित कई देशों में दिखाई दे रहा था।

दिव्यांगजनों के अधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र संधि

दिव्यांगजनों के अधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र संधि (2006), जिसे संयुक्त राष्ट्र द्वारा पहली बार कानूनी रूप से बाध्यकारी दिव्यांगता

विशिष्ट मानवाधिकार संधि के रूप में अंगीकार किया गया था, जिसमें दिव्यांगता को अक्षमता के रूप में स्वीकार किया था जिसके कारण दूसरों के साथ समानता के आधार पर समाज में ऐसे व्यक्तियों की पूर्ण और प्रभावी भागीदारी में बाधा आती है। इस बारे में दिव्यांगों के अधिकार संबंधी संधि प्रलेखन में एक स्पष्टीकरण है कि दिव्यांग व्यक्तियों में वे लोग शामिल हैं जिनमे दीर्घकालिक शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदी दोष हैं जिसके कारण समाज में उनकी पूर्ण और प्रभावी भागीदारी में बाधा आ सकती है। संयुक्त राष्ट्र दिव्यांगजन अधिकार संधि कई मायनों में दिव्यांगता के चिकित्सा मॉडल के सामाजिक मॉडल में बदलाव को चिह्नित करता है।

दिव्यांगजनों के अधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र संधि ने नि:संदेह दिव्यांगता नीति के प्रारूप में बदलाव को चिह्नित किया है। कई देशों में, जहां दिव्यांगता को दान या कल्याण की अवधारणा से जोड़ने के बजाय मानवाधिकारों के संदर्भ में रखा गया था, और वहां कानून का मसौदा तैयार किया जाना शुरू किया गया है।

भारत में दिव्यांगों के लिए नीति का विकास

भारत में, 1970 और 1980 के दशक की शुरुआत में दिव्यांगता के मुद्दे को सामाजिक श्रेणी के रूप में मजबूती प्रदान की गई, हालांकि यह अवधारणा एक सामाजिक कार्य के दायरे में रही। यह वह अवधि है जिसके दौरान विशेष रूप से दिव्यांगता के संदर्भ में निर्मित हुई संस्थागत संरचनाएं (विशेष स्कूल, राष्ट्रीय संस्थान) और गैर-सरकारी संगठन आगे आए। भारत में दिव्यांगता के सवाल पर एक अंतरराष्ट्रीय विषय की शुरुआत भी 1980 में हुई थी। संयुक्त राष्ट्र ने 1981 को दिव्यांगजनों के लिए अंतरराष्ट्रीय वर्ष घोषित किया। भारत में, संयुक्त राष्ट्र के दिशानिर्देशों के अनुरूप दिव्यांगजनों के लिए अंतरराष्ट्रीय वर्ष के सिलसिले में एक राष्ट्रीय समिति की स्थापना की गई है। दिव्यांगजन अधिनियम 1995 में संरचनात्मक प्रावधानों की एक पूरी शृंखला थी लेकिन दिव्यांगता अधिकार के परिप्रेक्ष्य में इस कानून में कोई खुला विचार नहीं था। यह ज्यादातर कल्याण के बारे में था, जो विभिन्न प्रावधानों और राज्य योजनाओं के संबंध में था।

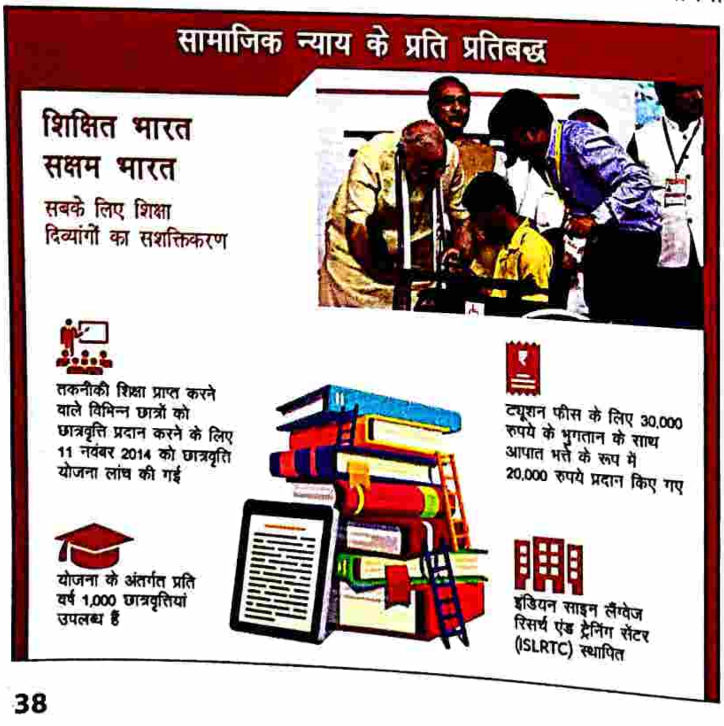

भारत में दिव्यांगता के सवाल पर एक अंतरराष्ट्रीय विषय की शुरुआत भी 1980 में हुई थी। संयुक्त राष्ट्र ने 1981 को दिव्यांगजनों के लिए अंतरराष्ट्रीय वर्ष घोषित किया। भारत में, संयुक्त राष्ट्र के दिशानिर्देशों के अनुरूप दिव्यांगजनों के लिए अंतरराष्ट्रीय वर्ष के सिलसिले में एक राष्ट्रीय समिति की स्थापना की गई है।

दिव्यांगों के अधिकार अधिनियम, 2016

दिव्यांगों के अधिकार अधिनियम 2016 ने दिव्यांगों के अधिकार अधिनियम 1995 का स्थान लिया और यह दिव्यांगों के अधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र संधि के दायित्वों के अनुरूप है, जिस पर भारत ने भी हस्ताक्षर किए हैं। 12 दिसंबर, 2016 को दिव्यांगों के अधिकार का कानून बनाया गया और 19 अप्रैल, 2017 से यह लागू हो गया। दिव्यांग अधिकार अधिनियम में समाज में दिव्यांगजनों की पूर्ण भागीदारी और उनका समावेशन सुनिश्चित करने के लिए और लोगों द्वारा उनकी पूर्ण स्वीकृति के उपायों को शामिल किया गया है।

दिव्यांगता-समावेशी नीतियों के लिए दोतरफा दृष्टिकोण

दिव्यांगता समावेशन के प्रति दोतरफा दृष्टिकोण की अवधारणा यह है कि, दिव्यांगता-विशिष्ट, लक्षित नीतियों और संस्थानों के अलावा सभी मौजूदा नीतियों और विकास उपायों में दिव्यांगता-केंद्रित दृष्टिकोण होना चाहिए। इस संदर्भ के माध्यम से हमने समकालीन समावेशन उपायों को समझने के साथ-साथ एक बेहतर समावेशी समाज के निर्माण के लिए आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त किया है।

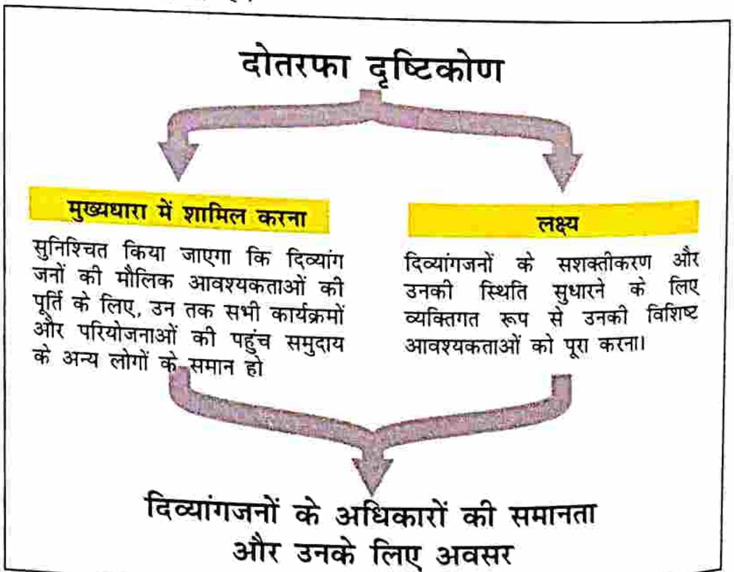

स्रोत : *https://hhot.cbm.org/en/card/twin-track-approach*

तरीका 1: लक्षित, दिव्यांगजनों के लिए विशिष्ट नीतियां और उपाय

लक्षित, दिव्यांगजनों के लिए विशिष्ट उपाय वे हैं जो विशेषकर दिव्यांगों के सशक्तीकरण और समावेशन के लिए हैं। दिव्यांगों के अधिकारों के लिए अधिनियम 2016 (दिव्यांगजन अधिनियम 1995 भी जिसे प्रतिस्थापित किया गया) दिव्यांगता-विशिष्ट लक्षित कानून का एक उदाहरण है। भारत में, संस्थागत निकाय भी हैं जो विशेष रूप से दिव्यांगता समावेशन के लिए बनाए गए हैं।

राष्ट्रीय संस्थान और सांविधिक निकाय

1. सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के तहत दिव्यांग व्यक्तियों के सशक्तीकरण के लिए विभाग
2. आत्मकेंद्रित, प्रमस्तिष्क पक्षाघात, मंद बुद्धि और एकाधिक दिव्यांगता वाले व्यक्तियों के कल्याण के लिए राष्ट्रीय न्यास
3. एकाधिक दिव्यांगता वाले व्यक्तियों के सशक्तीकरण के लिए राष्ट्रीय संस्थान
4. बुद्धिमता अक्षमता वाले व्यक्तियों के सशक्तीकरण के लिए राष्ट्रीय संस्थान
5. भारतीय पुनर्वास परिषद
6. दिव्यांग व्यक्तियों के लिए समग्र क्षेत्रीय केंद्र
7. दिव्यांग व्यक्तियों के लिए मुख्य (और राज्य) आयुक्त
8. अली यावर जंग नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ स्पीच एंड हियरिंग डिसेबिलिटीज
9. दिव्यांगजन के लिए पं. दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्रीय संस्थान
10. दृष्टिबाधित व्यक्तियों के सशक्तीकरण के लिए राष्ट्रीय संस्थान
11. भारतीय कृत्रिम अंग निर्माण निगम
12. राष्ट्रीय दिव्यांग वित्त और विकास निगम
13. जिला दिव्यांगता पुनर्वास केंद्र
14. भारतीय सांकेतिक भाषा अनुसंधान और प्रशिक्षण केंद्र।

दिव्यांगता-विशिष्ट लक्षित उपायों में कुछ योजनाओं के नाम इस प्रकार हैं-सहायकों और उपकरणों की खरीद/फिटिंग के लिए दिव्यांगजनों की सहायता की योजना (एडिप), ब्रेल प्रेस स्कीम और दीनदयाल विकलांग पुनर्वास योजना (डीडीआरएस)।

इस प्रकार की लक्षित योजनाएं और दिव्यांगता-विशिष्ट संस्थान हालांकि बहुत हद तक विशेष रूप से देश की दिव्यांगता-समावेशी राष्ट्रीय नीति की दिशा में बढ़ने के शुरुआती चरणों में महत्वपूर्ण हैं। वास्तव में समावेशी समाज का निर्माण करने के लिए हमारी नीतियों को दोतरफा दृष्टिकोण के दूसरे तरीके पर केंद्रित होने की आवश्यकता है, जो सभी मौजूदा नीतियों और उपायों में दिव्यांगता समावेशन को मुख्यधारा में शामिल कर रहा है। यह समावेशी समाज के दृष्टिकोण से अधिक दिलचस्प है क्योंकि यह दर्शाता है कि यहां तक कि ऐसे संस्थानों और नीतियों का भी समावेशन किया जा रहा है जो दिव्यांग व्यक्तियों की चिंताओं का सीधे समाधान नहीं कर रहे हैं। यह वास्तव में दिव्यांगता-समावेशी समाज के निर्माण के प्रति समावेशन और उत्सुकता की भावना को दर्शाता है।

तरीका 2: दिव्यांगता को मुख्यधारा में शामिल करना

दिव्यांगता समावेशन को मुख्यधारा में शामिल करने की दिशा में समकालीन नीतियां और उपाय

सामान्य लोगों के लिए अभिप्रेत, नीति और संस्थागत ढांचे में दिव्यांगता के समावेशन को मुख्यधारा में शामिल करने के कुछ सर्वोत्तम तरीकों को निम्नलिखित रूप से रेखांकित किया गया है। आदर्श रूप से सामान्य लोगों को समाज के सभी वर्गों को मुख्यधारा में शामिल करना चाहिए, लेकिन इस तरह की अधिकांश नीतियां और कार्य प्रणालियां दिव्यांग व्यक्तियों के लिए अब तक शायद ही कभी समावेशी रही हों।

1. शिक्षा में दिव्यांगता को मुख्यधारा में शामिल करना-समावेशी शिक्षा उपाय

मुख्यधारा के दृष्टिकोण का निर्माण करने वाले शुरुआती क्षेत्रों में से एक शिक्षा का क्षेत्र है, उदाहरण के लिए, दिव्यांग बच्चों को एकीकृत करने के संबंध में 2001 में शुरू किए गए सर्व शिक्षा अभियान में इसे अधिक सुस्पष्ट किया गया था। इसके तहत प्रति बच्चा प्रति वर्ष 1200 रुपये नगद अनुदान के रूप में दिए जाते हैं, दिव्यांग छात्रों के लिए जिला स्तर पर योजनाएं बनाई जाती हैं और संसाधन संस्थानों को शामिल किया जाता है। सर्व शिक्षा अभियान के तहत शून्य-अस्वीकृति नीति का पालन किया जाता है जिसका अर्थ

है कि किसी भी दिव्यांग बच्चे को स्कूल में दाखिला देने से इंकार नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, दिव्यांग बच्चों और युवाओं की समावेशी शिक्षा के लिए कार्य योजना, 2005 में दिव्यांग बच्चों के प्रभावी रूप से सार्थक समावेशन के लिए कुछ प्रावधान किए गए हैं। ऐसे अन्य उपाय भी किए गए हैं, जैसे विशेष शिक्षा के लिए शिक्षकों को तैयार करना और विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए उच्च शिक्षा 1999-2000, इन्हें मुख्य रूप से दिव्यांगों के अनुकूल पाठ्यक्रम विकसित करने के साधन के रूप में और मुख्यधारा की शिक्षा में शिक्षकों को लक्षित करने के लिए शुरू किया गया था। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का उद्देश्य यह भी है कि दिव्यांग बच्चों को मुख्यधारा की शैक्षिक प्रणाली में भागीदारी के समान अवसर मिलें। इस नीति में आंतरिक रूप से दिव्यांगजनों के अधिकार अधिनियम 2016 को, इसके दायरे में मान्यता दी गई है।

2. स्वच्छता सुलभता उपाय

जल शक्ति मंत्रालय के पेयजल और स्वच्छता विभाग के स्वच्छ भारत मिशन ने दिव्यांगों के लिए सुलभ घरेलू स्वच्छता के वास्ते (दिसंबर 2015) दिशानिर्देश बनाए। मंत्रालय ने घरेलू शौचालयों के लिए सरकारी सहायता के दायरे को भी व्यापक कर दिया ताकि इसमें दिव्यांग व्यक्तियों को भी शामिल किया जा सके। छत्तीसगढ़ राज्य ने दिव्यांग व्यक्तियों और ट्रांसजेंडरों के लिए समावेशी और सुलभ स्वच्छता नीति शुरू की। सितंबर 2019 तक, समूचे भारत में 12 लाख घरों में सुलभ शौचालयों का निर्माण किया गया था।

3. सुलभ बैंकिंग

9 नवंबर, 2017 को भारतीय रिजर्व बैंक ने वरिष्ठ नागरिकों और दिव्यांगजनों के लिए बैंकिंग सुविधा दिशानिर्देश जारी किए। इनके तहत बैंकों को निर्देश दिए गए कि वरिष्ठ नागरिकों और दिव्यांगजन के लिए समावेशी तंत्र स्थापित किया जाए जिसके तहत प्राथमिकता सेवा के रूप में इनके लिए विशेष काउंटर बनाए जाएं और बैंक जाने में असमर्थ ऐसे लोगों को उनके घर पर बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं। इसके लिए पहली जुलाई 2015 को एक मास्टर परिपत्र जारी किया गया जिसमें विशेष रूप से बैंकों में सुलभ ग्राहक सेवा के मामले में, बीमार / बुजुर्ग / अक्षम व्यक्तियों को प्रदान की जाने वाली सुविधाओं का उल्लेख किया गया था। उपरोक्त आदेशों के बारे में सहयोग न करने वाले बैंकों की जब शिकायतें बढ़ीं, तो भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर ने 4 अक्टूबर, 2017 को विकास और नियामक नीतियों पर वक्तव्य जारी किया, जिसमें निम्नलिखित चेतावनी जारी की गई।

देश भर में दिव्यांग व्यक्तियों ने बैंकिंग सुविधाओं का लाभ उठाने के लिए दिव्यांगता समावेशी बैंकिंग कार्यों के लिए रिजर्व बैंक के इन प्रावधानों का लाभ उठाया है। रिजर्व बैंक, दिव्यांगता अधिकार समुदाय की मांगों के लिए लगातार उत्तरदायी रहा है, एक तरह से एक संगठन की मौजूदा नीतियों और कार्यरूपों के भीतर दिव्यांगता समावेशन को मुख्यधारा में शामिल करने का चलन स्थापित करने वाला रहा है।

वरिष्ठ नागरिकों और दिव्यांगजन के लिए बैंकिंग सुविधा -ऐसी खबरें हैं कि बैंक, वरिष्ठ नागरिकों और दिव्यांगजन को बैंकिंग सुविधाओं के इस्तेमाल के लिए हतोत्साहित कर रहे हैं और उन्हें बैंक शाखाओं से वापस लौटा रहे हैं। डिजिटल लेनदेन और एटीएम के उपयोग पर जोर देने की आवश्यकता के बावजूद, वरिष्ठ नागरिकों और दिव्यांगजन की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील होना जरूरी है। यह निर्णय लिया गया है कि बैंकों को ऐसे व्यक्तियों की जरूरतों को पूरा करने के लिए स्पष्ट तंत्र स्थापित करने का निर्देश दिया जाए ताकि वे स्वयं को हाशिए पर महसूस न करें। लोकपालों को भी इस संदर्भ में शिकायतों पर ध्यान देने की सलाह दी जाएगी।

रिजर्व बैंक ने इसके अलावा, कई अन्य दिव्यांगता समावेशी दिशा-निर्देश जारी किए हैं, जैसे - मानसिक रूप से दिव्यांग व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय न्यास अधिनियम के तहत नियुक्त संरक्षक द्वारा बैंक लेखा संबंधी कार्यों के बारे में दिनांक 19 नवंबर, 2007 को जारी रिजर्व बैंक की अधिसूचना और दृष्टिबाधित लोगों के लिए बैंकिंग सुविधाओं के बारे में दिनांक 4 जून, 2008 को जारी अधिसूचना।

देश भर में दिव्यांग व्यक्तियों ने बैंकिंग सुविधाओं का लाभ उठाने के लिए दिव्यांगता समावेशी बैंकिंग कार्यों के लिए रिजर्व बैंक

के इन प्रावधानों का लाभ उठाया है। रिजर्व बैंक, दिव्यांगता अधिकार समुदाय की मांगों के लिए लगातार उत्तरदायी रहा है, एक तरह से एक संगठन की मौजूदा नीतियों और कार्यरूपों के भीतर दिव्यांगता समावेशन को मुख्यधारा में शामिल करने का चलन स्थापित करने वाला रहा है।

4. गरीबी उन्मूलन संरचनाओं में दिव्यांगता को मुख्यधारा में शामिल करना: राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन, भारत सरकार के दिव्यांगता को मुख्यधारा में शामिल करने के प्रभावशाली प्रयासों में से एक है। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के सामाजिक समावेशन प्रोटोकॉल में सबसे गरीब लोगों और ग्रामीण गरीब समुदायों के दिव्यांगजन सहित समुदाय के वंचित वर्गों को जल्द और प्राथमिकता के रूप में रेखांकित किया गया है। कुदुम्बश्री (केरल) और जीविका (बिहार) जैसे राज्य ग्रामीण आजीविका अभियानों के तहत दिव्यांगता समावेशी उपाय लागू किए गए हैं जिनसे भारत में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के तहत दिव्यांगता को मुख्यधारा में शामिल करने के तरीके निकाले गए हैं।

विकास में दिव्यांगता को मुख्यधारा में शामिल करना: आगे का रास्ता किसी भी विभाग के लिए मौजूदा नीतियों और उपायों के भीतर दिव्यांगता समावेशन को मुख्यधारा में शामिल करने की दिशा में प्रारंभिक उपाय निम्न प्रकार हैं –

- समूचे संगठन के लिए दिव्यांगता समावेशन नीति या रणनीति पत्र तैयार करना। (उदाहरण- बिहार राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन, दिव्यांगता समावेशी दिशानिर्देश, दिनांक 13 अगस्त, 2020)
- परियोजना के सभी मौजूदा विषयों और विभागों को दिव्यांगता-समावेशन घटकों को शामिल करना चाहिए।
- निगरानी और मूल्यांकन ढांचे में दिव्यांगता-समावेशी संकेतक घटकों, जैसे कि मासिक / त्रैमासिक / अर्ध-वार्षिक / वार्षिक रिपोर्टिंग प्रारूप को शामिल करना।
- दिव्यांगता संकेतक, वार्षिक कार्रवाई और समीक्षा योजना का हिस्सा होना चाहिए।
- अंतर-विभागीय, विषयगत और श्रेणी-उन्मुख समीक्षा प्रक्रियाओं में दिव्यांगता सूचक प्रश्न होने चाहिए।
- सभी कर्मचारियों को दिव्यांगता अधिकार ढांचे, समावेशन और प्रचलित सर्वोत्तम उपायों के बारे में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
- भर्ती और मानव संसाधन नीतियां दिव्यांगजन अधिनियम 2016 के अनुरूप होनी चाहिए।
- भवन, विभागीय वेबसाइट, आंतरिक /बाहरी संचार उपायों में, पहुंच मानकों को शामिल किया जाना चाहिए और ये दिव्यांगजन अधिनियम 2016 के अनुरूप होने चाहिए।
- दिव्यांगता समावेशन के घटकों को वार्षिक आयोजना, बजट आवंटन, मानव संसाधन नीति, निगरानी तथा मूल्यांकन, डेटा संग्रह उपायों, संचार, प्रशिक्षण और प्रलेखन के भीतर शामिल करना। ऐसा करके ही माना जा सकता है कि कोई संगठन अपने कार्यान्वयन कार्यक्रमों में दिव्यांगता समावेशन को प्रभावी रूप से शामिल कर सकता है।

कुल मिलाकर, वास्तव में दिव्यांगता-समावेशी समाज वह है जहां सभी नीतियों और विकास पहलों में समाज के हाशिए के सभी वर्गों को शामिल किया जाता है। इस लक्ष्य के साथ आगे बढ़ने के लिए दिव्यांगता समावेशन को मुख्यधारा में शामिल करना एक रचनात्मक तरीका है। ■

संदर्भ

1. Oliver, M. (2009). Understanding disability from theory to practice 2nd edn. England: Palgrave Macmillan.
2. Ranta, R. S., Kumar, V., & Gupta, P. Understanding Disability across Different Belief Systems.Imperial Journal of Interdisciplinary Research, 2(9) 2016. Available at: https://www.researchgate.net/profile/Randhir_Ranta/publication/333867115_Understanding_Disability_across_Different_Belief_Systems/links/5d09e100458515ea1a70b518/Understanding-Disability-across-Different-Belief-Systems.pdf
3. Drake, Robert F. Understanding disability policies. London: Macmillan, 1999.
4. Haegele, J. A., & Hodge, S. (2016). Disability discourse: Overview and critiques of the medical and social models. Quest, 68(2), 193-206.
5. Shakespeare, T. (2006). The social model of disability. The disability studies reader, 2, 197-204.
6. Oliver, M. 2013. "The Social Model of Disability: Thirty Years on." Disability & Society 28 (7): 1024-1026.
7. Mahler, H. (1981). The International Year of Disabled Persons and The World Health Organization.
8. Office of the United Nations High Commissioner for Human Rights, Committee on the UN Convention on the Rights of Persons with Disabilities. Statement on Article 14 of the Convention on the Rights of Persons with Disabilities. Available at: http://www.ohchr.org/EN/NewsEvents/Pages/DisplayNews.aspx?NewsID=15183&LangID=E#sthash.CxCvOOiG.dpuf (accessed Oct 7, 2020).
9. Szmukler, G. (2015). UN CRPD: equal recognition before the law. The Lancet Psychiatry, 2(11), e29.
10. Callus, A. M., & Camilleri-±hra, A. (2017). Nothing about us without us: disabled people determining their human rights through the UNCRPD.
11. Mittal, Nachiketa, UNCRPD to RPD Act, 2016: A Decade of Disabled-Friendly Judicial Activism (December 16, 2017). TISS Journal of Disability Studies and Policy Research, Vol. I, Issue I, December 2017.
12. Ghosh, N. (2012). Disabled definitions, impaired policies: Reflections on limits of dominant concepts of disability. Institute of Development Studies.
13. The Rights of Persons with Disability Act. 2016. [Last accessed on 2020 Dec 28]. Available from: http://www.disabilityaffairs.gov.in/upload/uploadfiles/files/RPWD%20ACT%202016.pdf
14. Gulyani, R. (2017). Educational Policies in India with Special Reference to Children with Disabilities. Indian Anthropologist, 47(2), 35-51. Retrieved October 5, 2020, from https://www.jstor.org/stable/26494030
15. MDWS, WaterAid. (2015) The Handbook on Accessible Household Sanitation for Persons with Disabilities (PwDs), WaterAid: India. http://www.mdws.gov.in/handbook-accessible-householdsanitation-persons-disabilities-pwds
16. Das, Siddhartha; Gupta, Pragya; Stephen, Shyni D. (2016): Everyone everywhere: accessible household sanitation for persons with disabilities. Loughborough University. Conference contribution. https://hdl.handle.net/2134/31314
17. https://www.sbmgcg.in/backend_panels/downloads/1550468168Chhattisgarh%20State%20Inclusive%20WASH%20Policy%20draft.pdf
18. http://sujalswachhsangraha.gov.in/sites/default/files/Strategy%20for%20accessible%20sanitation_ENG_Final.pdf
19. https://rbi.org.in//Scripts/BS_CircularIndexDisplay.aspx?Id=11163

अक्षमता से समर्थता

डॉ धारिणी मिश्र

ऐसे अदृश्य लक्षणों का पता लगाना सामान्य डॉक्टरों के लिए भी मुश्किल होता है। ऐसी अक्षमताओं के लक्षणों की या तो पहचान ही नहीं हो पाती या इनका गलत निदान हो जाता है। अनुसंधानों से यह बात सामने आई है कि सीखने से संबंधित दुर्बलताओं का पता लगाने में डॉक्टर तथा अन्य स्वास्थ्य-कर्मी अक्सर लंबा समय लगा कर परस्पर विरोधी निदान निकालते रहते हैं। साथ ही, चिकित्सा के क्षेत्र में नए-नए अनुसंधानों की वजह से चिकित्सा के तरीके और मानक भी बदलते रहते हैं, जिससे अदृश्य अक्षमताओं का निदान और भी जटिल हो जाता है।

जब हम दिव्यांगता की बात करते हैं तो अनेक लोगों के मन में ऐसे व्यक्तियों की छवि बनती है जिनके साथ व्हीलचेयर, सफ़ेद छड़ी या हियरिंगएड्स जुड़े हैं या वे सांकेतिक भाषा इस्तेमाल कर रहे हैं, या फिर उनकी शारीरिक संरचना हमसे अलग अथवा हटकर है। लेकिन ऐसी भी अनेक कमियां शामिल हैं जो देखने वालों को नज़र नहीं आतीं। अमेरिकी स्रोतों पर आधारित आंकड़ों के अनुसार, हर 18 में से 1 व्यक्ति किसी न किसी अदृश्य अथवा छिपी हुई दिव्यांगता या अक्षमता से ग्रस्त होता है जो उसकी सामाजिक भूमिका और जिम्मेदारियां निभाने में बाधक बनती है। विकासशील देशों की स्थिति ऐसी ही या इससे भी बुरी हो सकती है। छिपी दिव्यांगताओं और अक्षमताओं से जुड़े ऐसे विशिष्ट मनोवैज्ञानिक मुद्दे होते हैं जो स्थितियों को ज्यादा जटिल और तकलीफदेह बना देते हैं।

उस मां के बारे में सोचिए जिसका ऑटिज्म से पीड़ित बच्चा तंत्रिका-तंत्र की गड़बड़ियों के कारण अटपटा व्यवहार करता है और मां को बच्चे को अनुशासनहीन तथा नियंत्रण से बाहर रखने का दोषी समझा जाता है। इसी तरह, सीखने से संबंधित

लेखिका डॉ धारिणी मिश्र ह्यूमन डेवलपमेंट एंड चाइल्डहुड स्टडीज़ में पीएच-डी. हैं। वह ऑटिज्म और सम्प्रेषण-संबंधी कमजोरियों वाले बच्चों को विशेष तरीकों से शिक्षा देने, उनकी समझ बेहतर बनाने वाले तरीकों तथा वैकल्पिक संवाद कार्य-नीतियाँ विकसित करने के प्रयासों में संलग्न हैं। वह ऑटिस्टिक बच्चों के लिए टेक्नोलॉजी पर आधारित सामग्री तैयार करने में भी जुटी हैं। वह केंद्र सरकार में वरिष्ठ अधिकारी रही हैं। उन्होंने 25 साल की सरकारी सेवा के बाद स्वैच्छिक सेवा-निवृत्ति ले ली है। ईमेल: mishradharinim@gmail.com

(आलेख में सभी चित्र केवल सांकेतिक हैं)

दुर्बलताओं वाले बच्चों को आलसी होने और पढ़ाई में ध्यान न देने के लिए लगातार लताड़ा जाता है। अदृश्य अथवा साफ नज़र नहीं आने वाली अक्षमता से ग्रस्त लोगों को, एक ओर तो, अपने आस-पास के माहौल में जगह बनाए रखने के लिए रोज़मर्रा की जिंदगी में कई सामंजस्य करने पड़ते हैं, दूसरी ओर उन्हें अपने बारे में बनी गलत धारणाओं का भी मुक़ाबला करना पड़ता है, जैसे कि, वे अयोग्य, आलसी और चिड़चिड़े हैं, कहना नहीं मानते और समझाई गई बातों पर ध्यान नहीं देते। इस तरह, ऐसे लोगों के साथ समस्या यह हो जाती है वे सामान्य 'नज़र आते हैं,' इसलिए सामान्य कद-काठी और शरीर नज़र आने की वजह से उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे भी सामान्य लोगों जैसी कुशलता से काम करें।

अदृश्य अथवा साफ नज़र नहीं आने वाली अक्षमताओं से ग्रस्त लोगों को, एक ओर तो, अपने आस-पास के माहौल में जगह बनाए रखने के लिए रोज़मर्रा की जिंदगी में कई सामंजस्य करने पड़ते हैं, दूसरी ओर उन्हें अपने बारे में बनी गलत धारणाओं का भी मुक़ाबला करना पड़ता है, जैसे कि, वे अयोग्य, आलसी और चिड़चिड़े हैं, कहना नहीं मानते और समझाई गई बातों पर ध्यान नहीं देते। इस तरह, ऐसे लोगों के साथ समस्या यह हो जाती है कि वे सामान्य 'नज़र आते हैं,' इसलिए सामान्य कद-काठी और शरीर नज़र आने की वजह से उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे भी सामान्य लोगों जैसी कुशलता से काम करें।

सामान्य अदृश्य अक्षमता

बाहर से स्वस्थ, सामान्य दिखने वाले अनेक लोगों में होने वाली कुछ प्रमुख अदृश्य अक्षमताएं इस प्रकार हैं-

1. मस्तिष्क में बहुत मामूली चोट और चीजों को समझने से जुड़ी गड़बड़ियां (डेवलपमेंटल कोग्निटिव डिसऑर्डर्स) की वजह से याददाश्त न रहना, शरीर के अंगों का संचालन करने वाली मांसपेशियों का उपयोग नहीं कर पाना, कामों को ठीक से नियोजित न कर पाना या सलीके से न कर पाना, और ठीक से चीजों को समझ तथा समझा न पाना इन अक्षमताओं में शामिल हैं। ऐसी अक्षमताओं से ग्रस्त बच्चे ऊंचे स्तर की पढ़ाई-लिखाई और कामों के नियोजन में दिक्कत महसूस करते हैं और ऐसे वयस्कों को ज्यादा सटीक और कई स्तर वाले कामों और गणनाओं, जैसे डिजिटल लेन-देन में परेशानियां होती हैं। बाहर से देखने में, वे बिखरे-बिखरे से, माहौल से उखड़े हुए और अव्यवस्थित लगते हैं।
2. **सीखने से जुड़ी समस्याएं:** तंत्रिका-तंत्र की गड़बड़ियां जिनकी वजह से पढ़ने (डिस्लेक्सिया), लिखने (डिस्ग्राफिया) और गणनाओं (डिस्केल्कुलिया) में दिक्कतें आती हैं। इन सभी अक्षमताओं को अटेंसनडेफ़िसिट एंड हाइपर एक्टिविटी डिसऑर्डर (निर्देशों पर ठीक से ध्यान न दे पाना और अति चपलता) कहा जाता है। ऐसे व्यक्ति आलसी, उदासीन और जान-बूझ कर काम टालने वाले नज़र आते हैं।

3. **ऑटिज्म (स्व-लीनता, अपने में ही डूबे रहना) से संबंधित समस्याएं:** तंत्रिका-तंत्र के ठीक से विकास न होने से, बचपन से ही शुरू हो जाने वाली अक्षमताएं जो अपनी बात समझा पाने, सामाजिक जीवन के कौशल समझ पाने और सामाजिक संपर्क की क्षमता पर बहुत बुरा असर डालती हैं। ऐसे लोग जिद्दी तरीके से एक जैसी हरकतें बार-बार करते हैं। ये अभद्र, अनुशासनहीन, जिद्दी, तमाशा खड़ा करने वाले, कहना नहीं मानने वाले और सहयोग न करने वाले नज़र आते हैं।

4. **लंबे समय से चल रही बीमारियां जैसे गुर्दों की कुछ बीमारियां, फाइब्रोमायाल्जिया (हड्डियों, पेशियों जोड़ों में लंबे समय तक दर्द और थकान वाली बीमारी):** ऐसी बीमारियों से ग्रस्त व्यक्ति हमेशा आलसी और काम से जी चुराता लगता है।

5. **डिप्रेशन (हताशा जैसी स्थिति):** ये मानसिक स्वास्थ्य और मन:स्थिति (मूड) से जुड़ी अक्षमताएं हैं जिसमें लगातार उदासी, निराशा मन पर छाए रहती है और मन उचाट रहता है जिससे व्यक्ति के सामान्य काम-काज पर असर पड़ता है। ये व्यग्रता (एंग्जाइटी) से जुड़ी अक्षमताएं हैं जिनमें मन पर लगातार चिंताएं और भय छाए रहते हैं। देखने से ऐसे लोग ज़रूरत से ज्यादा संवेदनशील लगते हैं जो जबर्दस्ती खुश दिखने और स्वयं को समायोजित (एडजस्ट) करने की कोशिश कर रहे होते हैं।

शोध से पता चला है कि ऐसी अक्षमताओं को छिपाने के दबाव से सामाजिक माहौल और कार्य-स्थल पर जो तनाव पनपते हैं, उनका स्वास्थ्य और खुशहाली पर बुरा असर पड़ता है (चौडोयर एंड क्विन, 2010)। बीमारी को छिपाए जाने से ऐसे बच्चे का आत्म-सम्मान कम होता है और उसे दूसरी मनोवैज्ञानिक समस्याएं भी हो सकती हैं। दूसरी ओर, बीमारी के बारे में सभी से खुल कर बात करने से इसे छिपाने के तनाव से मुक्ति मिल जाती है और इस बात की संभावना बढ़ जाती है कि बीमार व्यक्ति को अपने जैसे लोगों से सामाजिक सहयोग का नेटवर्क मिले और वह इसके लिए सक्रिय प्रयास भी करे। लेकिन, रोग को स्पष्ट रूप से बताए जाने की स्थिति में समाज के तंग नज़रिये को बदलने की भी ज़रूरत है।

6. **संवेदी अक्षमताएं (सेंसरीडिसऑर्डर्स):** कुछ बच्चों और व्यक्तियों में ज्ञानेन्द्रियों से जुड़े कुछ अनुभवों- जैसे रोशनी, आवाजों, गंध, स्पर्श और स्वाद - से बचने और उन्हें नापसंद करने की अक्षमताएं होती हैं। ऐसी स्थितियों में बच्चे स्थितियों को टालते हैं अथवा अतिरिक्त चपलता दिखा सकते हैं। ऐसे बच्चे बहुत शिकायती, सहयोग नहीं करने वाले और कहना न मानने वाले नज़र आते हैं।

चिकित्सकीय, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक चुनौतियां

अक्षमताओं की पहचान और निदान

लोग अक्षमताओं के लक्षण और स्थितियां महसूस कर सकते हैं लेकिन वे यह नहीं समझ पाते कि ये सामान्य कमियां नहीं हैं। उदाहरण के लिए सीखने से जुड़े अक्षमता-ग्रस्त विद्यार्थी बहुत अधिक हताश महसूस करे और स्कूल में उसे कम नंबर मिलें, लेकिन माता-पिता को वह फिसड्डी लग सकता है (लिच्ट, 1983)। जिसे पहली बार सुनने में दिक्कत हो रही हो, वह लोगों से दुबारा अपनी बात कहने या ज़ोर से बोलने को कह सकता है, लेकिन यह नहीं समझ पाता कि उसकी सुनने की शक्ति कमजोर हो रही है। ऐसा व्यक्ति अपने सामाजिक दायरे और बातचीत से बचने की कोशिश कर सकता है या इस बात से हताश हो सकता है कि उसके आस-पास के लोग जान-बूझ कर उसके सुन पाने में रुकावट पैदा कर रहे हैं। अक्सर माता-पिता, देख-भाल करने वाले और अध्यापक इन छुपी हुई अक्षमताओं को समझ नहीं पाते और ऐसे बच्चे की नज़र आ रही कमियों को सुधारने और उसे जबरन अनुशासित करने में, उसके विकास के लिए बेशकीमती वक्त बर्बाद हो जाता है। ऐसे अदृश्य लक्षणों का पता लगाना सामान्य डॉक्टरों के लिए भी मुश्किल होता है। ऐसी अक्षमताओं के लक्षणों की या तो पहचान ही नहीं हो पाती या इनका गलत निदान हो जाता है। अनुसंधानों से यह बात सामने आई है कि सीखने की अक्षमताओं का पता लगाने में डॉक्टर तथा अन्य स्वास्थ्य-कर्मी अक्सर लंबा समय लगा कर परस्पर विरोधी निदान निकालते रहते हैं। साथ ही, चिकित्सा के क्षेत्र में नए-नए अनुसंधानों की वजह से चिकित्सा के तरीके और मानक भी बदलते रहते हैं, जिससे अदृश्य अक्षमताओं का निदान और भी जटिल हो जाता है।

बदनामी का डर

बाहर से स्वस्थ नज़र आते बच्चे को अगर ऐसी बीमारी है जो जीवन भर उसकी

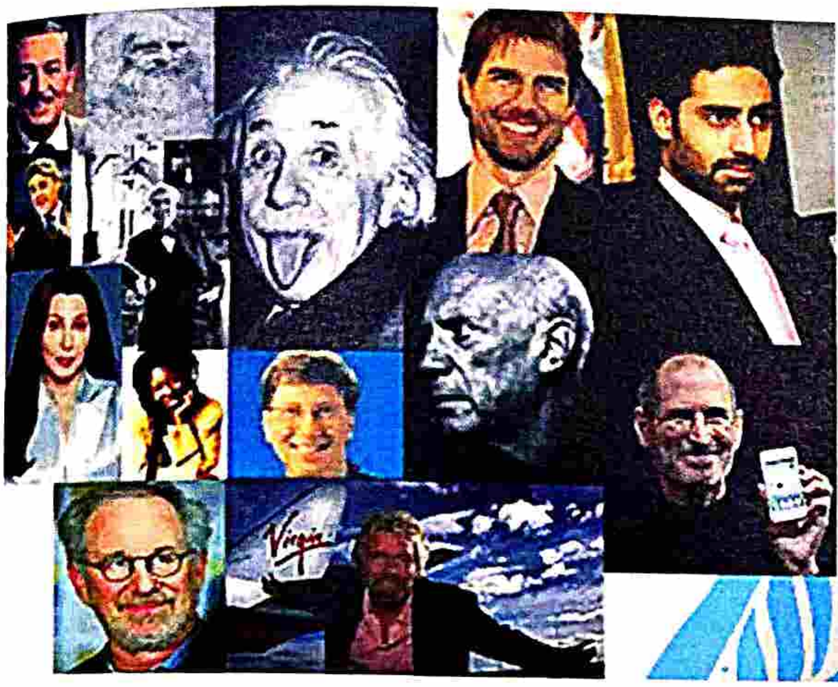

डिस्लेक्सिया से पीड़ित विश्व की कुछ प्रसिद्ध हस्तियां

Dysləxia

कार्य-क्षमता पर असर डालती रहेगी, तो इस बदनामी के डर से भी कई बार माता-पिता बच्चे की बीमारी को छिपाते हैं। शोध से पता चला है कि ऐसी अक्षमताओं को छिपाने के दवाव से सामाजिक माहौल और कार्य-स्थल पर जो तनाव पनपते हैं, उनका स्वास्थ्य और खुशहाली पर बुरा असर पड़ता है (चौडोयर एंड क्विन, 2010)। बीमारी को छिपाए जाने से ऐसे बच्चे का आत्म-सम्मान कम होता है और उसे दूसरी मनोवैज्ञानिक समस्याएं भी हो सकती हैं। दूसरी ओर, बीमारी के बारे में सभी से खुल कर बात करने से इसे छिपाने के तनाव से मुक्ति मिल जाती है और इस बात की संभावना बढ़ जाती है कि बीमार व्यक्ति को अपने जैसे लोगों से सामाजिक सहयोग का नेटवर्क मिले और वह इसके लिए सक्रिय प्रयास भी करे। लेकिन, रोग को स्पष्ट रूप से बताए जाने की स्थिति में समाज के तंग नज़रिये को बदलने की भी ज़रूरत है। ऐसे कई व्यावहारिक कारण होते हैं जिन्हें देखते हुए लोग इन अक्षमताओं के बारे में दूसरों को नहीं बताते।

पहली वजह यह है कि इन लोगों से भेदभाव को रोकने के लिए भले ही कानूनी संरक्षण मौजूद हों, फिर भी ऐसी अक्षमताओं से ग्रस्त व्यक्तियों को लोगों के पूर्वाग्रह और नकारात्मक आकलन झेलने ही पड़ते हैं। शोध-कार्यों से स्पष्ट होता है कि ऐसी किसी भी अक्षमता, खास कर मनोवैज्ञानिक अक्षमताओं को लेकर सामाजिक बदनामी की भावना रहती है (स्टोन एंड कोलेला, 1996।

ऐसी अक्षमताओं से ग्रस्त कुछ लोग इन्हें छिपाने का प्रयास करते हैं और दूसरे लोगों द्वारा अलग तरीके से अथवा नकारात्मक तरीके से देखे जाने की आशंका से बचने के लिए, अपने पक्ष में कानूनी प्रावधानों की मदद लेने से भी बचते हैं।

दूसरी वजह यह है कि बीमारी के बारे में बताने से लोग कई बार शक करते हैं कि क्या वाकई व्यक्ति या बच्चे को कई परेशानी है या वह 'नाटक कर रहा' है। जब कोई व्यक्ति देखने में सामान्य लगता है और विशेष व्यवहार या सुविधाओं की मांग करता है तो दूसरे लोगों को शंका हो जाती है कि कहीं कथित रूप से पीड़ित व्यक्ति यों ही तो विशेष सुविधाएं पाने की कोशिश नहीं कर रहा है (कोलेला, 2008)। अक्षमता-ग्रस्त होने की बदनामी के साथ-साथ, पीड़ित व्यक्ति को यह बदनामी भी झेलनी पड़ती है कि वह निजी फायदे के लिए बीमारी का बहाना बना रहा है।

पुनर्वास की दिशा में पहला कदम ऐसी समझ बढ़ाना है कि कुछ ऐसी आजीवन चल सकने वाली अक्षमताएं होती हैं जिनके लिए समाज को विशेष सहायता और व्यवस्थाएं करनी चाहिए। ऐसी समझ बढ़ाने में राइट फॉर पर्सन्स विथ डिसएबिलिटीज़ एक्ट, 2016 महत्वपूर्ण कदम है।

आत्म-सम्मान और आत्म-विश्वास से जुड़े मनोवैज्ञानिक मुद्दे

जो लोग अदृश्य अक्षमताओं से पीड़ित हैं (या उन्हें ऐसा लगता है), उन्हें ठंडे दिमाग से सोचना चाहिए कि सेहत, खुशहाली और कार्यकुशलता की कीमत पर, इन दिक्कतों के बारे में किसी को नहीं बता कर कथित बदनामी से बचना क्या अच्छा विकल्प है? अब तक के अनुसंधानों से ऐसा कोई स्पष्ट रास्ता सामने नहीं आया है कि कैसे ऐसे व्यक्ति विभिन्न सामाजिक और कार्य-क्षेत्रों की परिस्थितियों में अपने व्यक्तित्व और इन अक्षमताओं के खुलासे की प्रक्रिया के बीच ताल-मेल बैठा सकें। कुछ स्थितियों में, ज्यादा बदनामी की आशंका रहती है। तो कुछ अन्य स्थितियों में, अक्षमता को छिपाने के लिए ज्यादा प्रयास करने पड़ते हैं। साथ ही, स्कूलों और कार्य-क्षेत्रों के कुछ काम, विभिन्न अक्षमताओं से ज्यादा जुड़े होते हैं।

भारत में अदृश्य अक्षमताओं के उपचार का दायरा

भारत में इस समय एक करोड़ से अधिक बच्चे ऑटिज्म से और करीब इतने ही मिर्गी से पीड़ित हैं। करीब 15 करोड़ ऐसे हैं जिन्हें मानसिक बीमारियों में मदद की ज़रूरत है। इनसे भी अधिक लोग तरह-तरह की शारीरिक दिव्यांगताओं से पीड़ित हैं। 71 प्रतिशत से ज्यादा दिव्यांगताओं वाले बच्चे गांवों में रहते हैं जिनके लिए मदद मिल पाना और भी कठिन हो जाता है। हालांकि भारत में स्वास्थ्य सेवाओं का दायरा लगातार बढ़ रहा है, फिर भी मानसिक और शारीरिक अक्षमताओं के लिए विशेषज्ञ चिकित्सकों की कमी है। वर्ल्डइकोनॉमिक फोरम की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में इस समय 11 हजार मनोचिकित्सकों और 54 हजार मानसिक स्वास्थ्यकर्मियों की ज़रूरत है। 2018 के आंकड़ों के अनुसार, भारत में 3,500 मनोचिकित्सक और 54,000 मानसिक स्वास्थ्यकर्मी हैं, जिनमें क्लिनिकल मनोचिकित्सक, मनोविज्ञानी, मनोचिकित्सा के क्षेत्र में सामाजिक कार्यकर्ता और इस क्षेत्र में कार्यरत नर्सें शामिल हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डबल्यूएचओ) के अनुसार, भारत अपने स्वास्थ्य बजट का केवल 0.06 ही मानसिक स्वास्थ्य पर खर्च करता है।

समझ बढ़ाना और बुनियादी सुविधाएं बढ़ाना

पुनर्वास की दिशा में पहला कदम ऐसी समझ बढ़ाना है कि कुछ ऐसी आजीवन चल सकने वाली अक्षमताएं होती हैं जिनके लिए समाज को विशेष सहायता और व्यवस्थाएं करनी चाहिए।

लोग अक्षमताओं के लक्षण और स्थितियां महसूस कर सकते हैं लेकिन वे यह नहीं समझ पाते कि ये सामान्य कमियां नहीं हैं। उदाहरण के लिए सीखने से जुड़ी अक्षमता-ग्रस्त विद्यार्थी बहुत अधिक हताश महसूस करे और स्कूल में उसे कम नंबर मिलें, लेकिन माता-पिता को वह फिसड्डी लग सकता है (लिच्ट, 1983)। जिसे पहली बार सुनने में दिक्कत हो रही हो, वह लोगों से दुबारा अपनी बात कहने या ज़ोर से बोलने को कह सकता है, लेकिन यह नहीं समझ पाता कि उसकी सुनने की शक्ति कमजोर हो रही है। ऐसा व्यक्ति अपने सामाजिक दायरे और बातचीत से बचने की कोशिश कर सकता है या इस बात से हताश हो सकता है कि उसके आस-पास के लोग जान-बूझ कर उसके सुन पाने में रुकावट पैदा कर रहे हैं। अक्सर माता-पिता, देख-भाल करने वाले और अध्यापक इन छुपी हुई अक्षमताओं को समझ नहीं पाते और ऐसे बच्चे की नज़र आ रही कमियों को सुधारने और उसे जबरन अनुशासित करने में, उसके विकास के लिए बेशकीमती वक्त बर्बाद हो जाता है।

ऐसी समझ बढ़ाने में राइट फॉर पर्सन्स विद डिसएबिलिटीज़ एक्ट, 2016 महत्वपूर्ण कदम है। 1995 के अधिनियम में दिव्यांगता के केवल सात वर्ग थे, इस अधिनियम में ऐसे 21 वर्ग शामिल किए गए हैं। इस अधिनियम के दायरे में ऑटिज्म और सीखने से जुड़ी अक्षमताओं जैसी अदृश्य स्थितियां भी शामिल की गई हैं। राज्यों द्वारा सही दृष्टि के साथ कार्य-योजना बनाया जाना ज़रूरी है जिसके तहत प्रोफेशनलों, नियोजकों और जमीनी कार्यकर्ताओं को सही दिशा दी जा सके। यह आसान काम नहीं है क्योंकि हर अक्षमता की अपनी विशिष्ट समस्याएं हैं, क्षमता निर्माण के विशिष्ट तरीके हैं और चिकित्सकों तथा माता-पिता/अभिभावकों के प्रशिक्षण के तरीके भी अलग-अलग हो सकते हैं। इसलिए पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित प्रोफेशनलों, विशेष प्रशिक्षकों और चिकित्सकों की बहुत ज़रूरत है। हर तरह की अक्षमता के लिए अलग-अलग तरह के प्रशिक्षण की जरूरतों को देखते हुए रिहैबिलिटेशन काउंसिल ऑफ इंडिया (भारतीय पुनर्वास परिषद) का काम बहुत महत्वपूर्ण और जटिल हो जाता है।

अक्षमताओं से ग्रस्त बच्चों की विशेष जरूरतें

छोटी उम्र में ही अक्षमताओं से ग्रस्त हो जाने वाले बच्चों के पालन-पोषण और उपचार के लिए कुछ बातों का हर हाल में ध्यान रखा जाना चाहिए। ये बातें हैं- विकार का जल्दी पता लगाना, जल्दी आवश्यक उपचार शुरू कर देना और माता-पिता/बच्चे का ध्यान रखने वाले अन्य व्यक्तियों का प्रशिक्षण तथा उन्हें समर्थ-सक्षम बनाना। कच्ची उम्र में ही उपचार काफी सफल हो सकता है क्योंकि उस समय शरीर और मस्तिष्क की कोशिकाओं में प्रशिक्षण और उपचार से ठीक हो जाने की क्षमता और लचक होती है। इसीलिए प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में विकार का जल्दी पता लग जाना और प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मी द्वारा नियमित रूप से बच्चे के घर जाकर उसकी जांच करना बहुत ज़रूरी है। जैसे ही बच्चे में अक्षमता के लक्षण पता चलें, उसके माता-पिता को प्रोफेशनल परामर्श देना शुरू कर देना चाहिए। जितनी जल्दी बच्चे के माता-पिता को, उसकी अक्षमता

के सत्य से बचने की बजाय उसे स्वीकार करने में समर्थ बना दिया जाए, उतनी ही कुशलता से वे भविष्य में बच्चे की मदद कर पाने में सक्षम हो सकेंगे। ऐसी खास जरूरतों वाले बच्चे की क्षमताओं के बारे में जितनी जल्दी माता-पिता को सही परामर्श मिलेगा, आने वाले समय में बच्चे के शैक्षिक और पेशेवर ज्ञान के विकास के दौरान, माहौल में उसके ठीक से समायोजन (घुल-मिल सकने) में बहुत मदद मिलेगी। बच्चे के वयस्क होने पर सामाजिक जिम्मेदारियों को निभाने में भी ऐसा परामर्श बहुत काम आएगा। ऐसे बच्चों के माता-पिता के बीच अच्छी नेटवर्किंग और उनसे निरंतर संपर्क बनाए रखना बेहद उपयोगी है।

अक्षमता-ग्रस्त व्यक्तियों की खूबियों और क्षमताओं के अनुरूप विशेष शिक्षा और पेशेवर प्रशिक्षण

एक बार अक्षमता के समझ में आ जाने और उसे स्वीकार कर लेने के बाद आगे का काम आसान हो सकता है। अक्षमता-ग्रस्त व्यक्ति का अनेक तरीके से प्रशिक्षण और समाज में उचित समायोजन हो सकता है। इसके बारे में सबसे सटीक तरीका है कि जिन क्षेत्रों में अक्षमता-ग्रस्त व्यक्ति की खूबियां हों, उन पर विशेष ध्यान दिया जाए और उसे आगे बढ़ने का मौका दिया जाए। समझने में कमियों वाले बच्चों को उनके अनुकूल वैकल्पिक तरीकों से पढ़ाए जाने पर वे बहुत अच्छी तरक्की करते हैं। इसी तरह, ऑटिज्म से ग्रस्त बच्चों को भी अगर वैकल्पिक तथा बेहतर तरीकों से बातें समझाई जाएं तो वे भी जीवन में आगे बढ़ते हैं। इन तरीकों से, जीने और रोज़गार के बेहतर कौशल सीखे जा सकते हैं, और साथ ही व्यवहार से जुड़ी समस्याओं, जैसे मन उचटने तथा गुस्सा दिखने जैसी स्थितियों में भी मदद मिलती है क्योंकि तब बच्चे अपनी जरूरतों, भावनाओं और डरों-आशंकाओं के बारे में बेहतर तरीके से बता पाते हैं। अपनी समस्याएं बता सकने वाला, आत्म-विश्वास से भरा और भावनात्मक जुड़ाव के बारे में आश्वस्त बच्चा किसी भी सामाजिक परिस्थिति में अपने आप को ठीक से समायोजित कर सकेगा।

आजकल चिकित्साकर्मी कम उम्र में ही अक्षमताओं का बेहतर तरीके से पता लगाने में एआई टूल्स के ज्यादा इस्तेमाल के प्रयास कर रहे हैं। यही नहीं, एआई पर आधारित उपकरणों और ऐप्स से कुछ अक्षमताओं के संभावित उपचार के तरीके ही बदल रहे हैं। खास तौर से ऑटिस्टिक बच्चों की विशेष जरूरतों के लिए ऐप्स तथा उपकरण बनाए जा रहे हैं।

नए तरीकों तथा टेक्नोलॉजी और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के इस्तेमाल की ज़रूरत

जिन अक्षमताओं का सामान्यत: पता नहीं चलता, उनका समय रहते पता लगाने में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) के इस्तेमाल से बहुत मदद मिल सकती है। आजकल चिकित्साकर्मी कम उम्र में ही अक्षमताओं का बेहतर तरीके से पता लगाने में एआई टूल्स के ज्यादा इस्तेमाल के प्रयास कर रहे हैं। यही नहीं, एआई पर आधारित उपकरणों और ऐप्स से कुछ अक्षमताओं के संभावित उपचार के तरीके ही बदल रहे हैं। खास तौर से ऑटिस्टिक बच्चों की विशेष जरूरतों के लिए ऐप्स तथा उपकरण बनाए जा रहे हैं। स्मार्टफोनों में ऐसे एप्लीकेशनों से माता-पिता को, चित्रों, ध्वनियों और स्थितियों के प्रदर्शन के जरिए, अपने बच्चों की संवाद की जरूरतों में मदद करने और उन्हें बेहतर तरीके से पूरा करने में मदद मिलती है। इतना ही नहीं इन ऐप्स को रोज-रोज किए जाने वाले महंगे और विशिष्ट उपचारों के विकल्प के तौर पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है और इस तरह परिवारों का आर्थिक बोझ भी कम हो सकता है।

समावेशन और सामाजिक स्वीकार्यता

सरकारी संस्थानों और समाज को मिलकर, सजग रूप से ऐसे प्रयास करने चाहिए ताकि किसी भी तरह की अक्षमता वाले व्यक्तियों और बच्चों को समाज में ज्यादा से ज्यादा समावेशित किया जाए, घुला- मिलाकर रखा जाए। यह प्रक्रिया समाज के दो बुनियादी घटकों या परिवार और स्कूल से शुरू होनी चाहिए। आज हर घर में दुनिया भर की जानकारी मौजूद है और ऑनलाइन जानकारी के जरिये दुनिया भर की अच्छी बातें तथा व्यवहार सबको पता चल जाते हैं। ऐसे परिवेश में पुराने पूर्वाग्रहों और कलंकों-बदनामियों की धारणाओं का समाप्त होना निश्चित है। जब माता-पिता अपने बच्चे की अक्षमता को समझ लेंगे और स्वीकार कर लेंगे, सक्षम हो सकेंगे, तो वे बच्चे से सही संवाद कर के, उसके भविष्य को बेहतर बनाने में मदद भी कर सकेंगे। यह भी महत्वपूर्ण है कि अक्षमताओं और दिव्यांगताओं वाले व्यक्ति अपने अनुभवों को आस-पास के लोगों से बांट सकें ताकि लोग बेहतर तरीके से समझ सकें कि ऐसे लोगों की कैसे मदद की जा सकती है। भारतीय संस्कृति बड़ी जीवंत है। जरूरतमंदों की मदद करने की प्रवृत्ति हमारे समाज में है। नज़र न आने वाली दिव्यांगताओं के बारे में जागरूकता और समझ होने से, निश्चित रूप से ऐसे व्यक्तियों की सामाजिक स्वीकार्यता और उनका समाज में मेल-जोल बढ़ेगा। जब मन खुले होंगे, स्वीकार्यता की भावना होगी, शैक्षिक योग्यताओं और जीवन में मददगार कौशलों को समझने की ललक होगी, तो आवश्यक नवाचार, नई-नई तकनीकें और उपचार भी अपनाए जाने लगेंगे। इसलिए यह ज़रूरी है कि इन लोगों को सजग रूप से समाज में घुल-मिल कर समावेशित करने और इनके लिए आवश्यक समाधान तलाशने के काम तुरंत एक आंदोलन की तरह शुरू किए जाएं। ■

संदर्भ

1. www. Invisibleillnessforum.com
2. Paetzold] R.] García] M. F.] Colella] A.] Ren] R.] Triana] M.] Ziebro] M. (2008)] Perceptions of People with Disabilities% When is Accommodation Fair\
3. Licht] B. G. (1983). Cognitive–motivational factors that contribute to the achievement of learning disabled children. Journal of Learning Disabilities] 16
4. Stone and Colella] 1996] as cite in https%//www.researchgate.net %A_Model_of_Factors_Affecting_the_Treatment_of_Disabled_Individuals_in_Organizations.
5. WHO % Mental Health and Substance Abuse.
6. www.psychologytoday.com/us/blog/the&wide&wide&world&psychology/201306/invisible&disabilities
7. https%//www.weforum.org/agenda/2018/12/india&invisible&disabilities&autism&dyspraxia/

ग्राम विकास पर महात्मा गांधी का दृष्टिकोण

एम जी बसव राजा

गांधीजी का मानना था कि सहयोग और सहकारिता से ही सबका लाभ हो सकता है और आर्थिक समानता आ सकती है। गांधीजी की जीवन दृष्टि का सार है- सबका हित और कल्याण। इस जीवन-दृष्टि में समेकित कृषि, खाड़ी और ग्रामोद्योग, स्वच्छता और आरोग्य, ग्राम पंचायत, आत्म-निर्भरता, बुनियादी तालीम, सामाजिक मेल-जोल तथा सत्य और अहिंसा शामिल हैं। वह गांवों के समग्र विकास की बात सोचते हैं। उनका उद्देश्य अंत्योदय के जरिए सर्वोदय लाना और गांवों को ज्यादा से ज्यादा आत्म-निर्भर बनाना है।

महात्मा गांधी ने सामान्य जन की भलाई को अपनी वाणी, लेखन और कर्म में ओत-प्रोत कर लिया था। उन्होंने कथनी और करनी को समान रखने की चुनौतियों के बारे में निरंतर लिखा। स्वस्थ समाज के बारे में उनके बड़े सपने थे; इन सपनों को साकार करने के सैकड़ों रास्तों के बारे में उन्होंने सोचा; और हमारे सामाजिक जीवन को बेहतर बनाने का प्रयास किया। नव-क्लासिक अर्थशास्त्री अल्फ्रेडमार्शल ने किसी अर्थशास्त्री के लिए आवश्यक गुणों का जिक्र करते हुए कहा है कि आधुनिक अर्थशास्त्र के लगभग सभी महान निर्माता सौम्य स्वभाव, सबको साथ लेकर चलने की प्रवृत्ति वाले और मानवता के प्रति अनुराग से भरे रहे हैं। उन सभी ने अपने लिए धन-सम्पदा जुटाने के बारे में नहीं सोचा; उन्होंने धन-संपत्ति के आम जन के बीच न्यायपूर्ण वितरण की ज्यादा चिंता की। प्रख्यात अर्थशास्त्री ई.एफ. शुमाखेर का मानना है कि गांधीजी केन्स से भी बड़े अर्थशास्त्री कहे जा सकते हैं; वास्तव में उन्हें तो महानतम जन अर्थशास्त्री कहा जाना चाहिए। इस लेख में, हम ग्राम विकास पर गांधीजी के विचारों की चर्चा करेंगे।

गांधीजी ने यह महसूस किया कि गांवों की गरीबी दूर करने और ग्रामीण जनों का जीवन-स्तर बेहतर बनाने के लिए जमीनी स्तर से ही गांवों का नव-निर्माण करना होगा। उन्होंने किसानों के हितों के लिए आवाज उठाई और साफ तौर पर नगरीकरण तथा ग्रामीण जनों के शोषण की प्रवृत्ति के मर्म को समझ लिया और ग्राम अर्थव्यवस्था को नए सिरे से जागृत करने का प्रयास किया। अगर गांव नष्ट होंगे तो भारत भी नष्ट हो जाएगा। गांधीजी ने गांवों के विकास पर ज़ोर दिया। भारत का पूर्ण विकास तभी हो सकता है जब गांवों का विकास हो। स्वतन्त्रता आंदोलन की भारी व्यस्तता के दौर में भी गांधीजी समाज के लिए विकास का वैकल्पिक स्वरूप सुझाने पर पूरा ध्यान दे रहे थे।

ग्राम स्वराज

गांधीजी ने गांवों के स्वायत्त शासन को 'ग्राम स्वराज' का नाम दिया। गांव की 'सरकार' का काम-काज पांच व्यक्तियों की पंचायत द्वारा चलाया जाना चाहिए और इन व्यक्तियों को न्यूनतम निर्धारित योग्यता वाले गांव के पुरुष और महिला वयस्कों द्वारा चुना जाना चाहिए। यही सत्ता का विकेन्द्रीकरण है जिसमें सत्ता ग्रामीण जनों के हाथ में रहेगी। हर गांव अपने आप में एक पूर्ण लोकतंत्र होगा जो एक ओर तो, अपनी बुनियादी जरूरतों के लिए अपने पड़ोसियों से भी पूरी तरह आत्म-निर्भर होगा, वहीं दूसरी ओर, जहां आपसी निर्भरता की ज़रूरत है, वहां अनेक लोगों पर परस्पर निर्भर भी होगा। गांव का बुनियादी सरोकार यही होगा कि उसके निवासियों की जरूरतों के लिए अनाज, फल, हरी, पत्तीदार सब्जियों सहित सभी सब्जियां, दालें, औषधीय वनस्पतियां और कपास गांव में ही पैदा हो जाए। हर गांव में पर्याप्त गौशालाएं, मवेशियों के लिए चरागाह, बड़ों के लिए चौपाल और मिलने-जुलने तथा मनोरंजन की जगह और बच्चों के लिए खेलने का मैदान होना चाहिए। अगर ये सब ज़रूरतें पूरी होने के बाद भी ज़मीन बचे, तो गांव के लोग उस पर व्यावसायिक नकदी फसलें उगा सकते हैं।

एक आदर्श गांव में गांजा, तंबाकू, अफीम जैसी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक पौधों की खेती नहीं की जाएगी। आदर्श गांव की

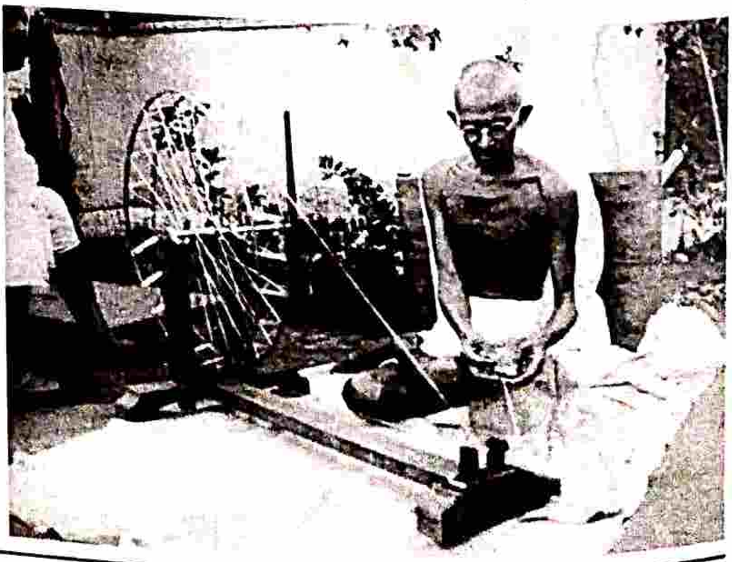

लेखक सर एम विश्वेश्वरैया पी जी सेंटर तथा गांधी भवन, मैसूर विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं निदेशक हैं। ईमेल: basavarajamg@gmail.com

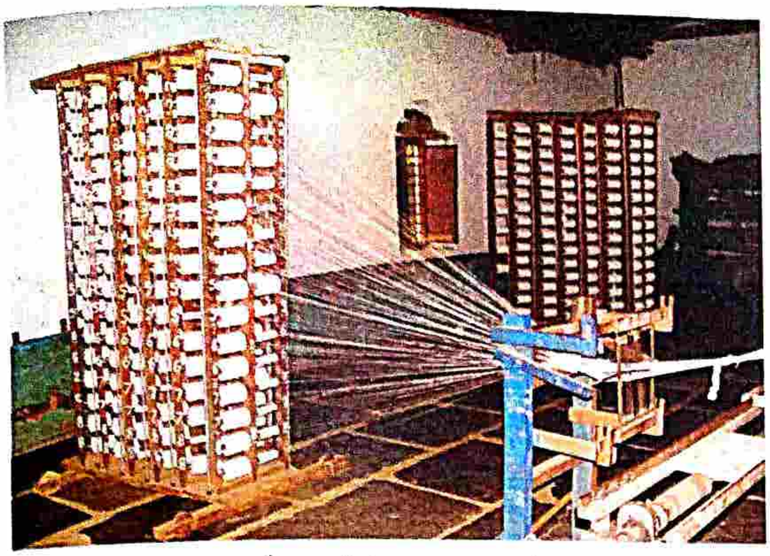

अपनी रंगशाला, स्कूल और सार्वजनिक सभागार होगा। गांव की अपनी जल-आपूर्ति व्यवस्था होनी चाहिए ताकि सभी को साफ और सुरक्षित पीने का पानी मिले। सभी के लिए बुनियादी प्राथमिक शिक्षा मुफ्त होनी चाहिए। जहां तक संभव हो, गांव की हर गतिविधि सहकारी आधार पर चलाई जानी चाहिए। सभी लोगों के बीच सद्भाव और भाईचारा होना चाहिए।

आदर्श ग्राम

गांधीजी ने अपने देश की प्रतिभा के अनुरूप विकासमान भारत की कल्पना की। उनकी आदर्श ग्राम की धारणा करीब एक हज़ार लोगों वाले और अपने लिए पर्याप्त उत्पादन करने वाले आत्मनिर्भर गांव की है। "आदर्श गांव को अपनी स्वच्छता-व्यवस्था कर सकने में सक्षम होना चाहिए। इसमें आवास के लिए जो कुटियां होनी चाहिए उनमें पर्याप्त रोशनी और हवा की आवाजाही होनी चाहिए; ये ऐसी सामग्री से निर्मित होनी चाहिए जो आस-पास पांच किलोमीटर के दायरे में मिल सकें। इन कुटियों का पर्याप्त अहाता होना चाहिए जिसमें घर के इस्तेमाल की सब्जियां उगाई जा सकें और मवेशियों को रखने की जगह हो सके। गांवों के रास्तों और गलियों में कम से कम धूल होनी चाहिए। हर गांव में उसके निवासियों की जरूरतों के अनुरूप और सबके लिए सुलभ कुएं होने चाहिए। सभी धर्मावलम्बियों के लिए उपासना-स्थल होने चाहिए और सब लोगों के मिलने-जुलने के लिए चौपाल होनी चाहिए। मवेशियों के लिए गांव का साझा चरागाह और एक सहकारी डेयरी भी होनी चाहिए। गांव में प्राइमरी और सेकेन्डरी स्कूल होने चाहिए जिनमें व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था भी होनी चाहिए। लोगों के विवादों के निपटारे के लिए पंचायतें होनी चाहिए। गांवों को अपनी ज़रूरतें पूरी करने के लिए अनाज, फल-सब्जियां और अपनी ही खादी के उत्पादन में सक्षम होना चाहिए।"

आदर्श गांव में उदार मन वाले विद्वान होने चाहिए। गांव में ही, अपने परिवेश से जुड़े कवि, कलाकार, वास्तुकार, भाषाविद् और शोधकर्ता होने चाहिए।

बुनियादी शिक्षा

शिक्षा का उद्देश्य लोगों के शरीर, मन और आत्मा का समग्र विकास होना चाहिए। गांधी जी ऐसी शिक्षा को 'बुनियादी तालीम' कहते थे। यह शिक्षा जीने की कला और उत्पादक श्रम से जुड़ी है। यह बुनियादी और शिल्प-आधारित शिक्षा है। व्यावसायिक शिक्षा के साथ-साथ, ग्रामीण लोगों को बुनियादी इतिहास, भूगोल और अंकगणित की शिक्षा भी दी जानी चाहिए। शिल्प-केन्द्रित शिक्षा स्वावलंबी कार्य सिखाए जाने चाहिए। विद्यार्थियों को अपने काम खुद करने, आत्म-निर्भरता और श्रम की गरिमा के पाठ, स्कूली विषयों के साथ पढ़ाए जाने चाहिए। गांधीजी का मानना था कि शिक्षा पाठ्य-पुस्तकों से कहीं ज्यादा रचनात्मक श्रम के जरिए सिखाए जाने चाहिए। ग्रामीण इलाकों में रोज़गार-केन्द्रित शिक्षा की बहुत ज़रूरत है।

स्वच्छता और स्वास्थ्य

गांधीजी के अनुसार, व्यक्तिगत स्वास्थ्य और स्वच्छता पर ध्यान देना गांवों के नव-निर्माण की दिशा में पहला कदम है। कचरे के सही प्रबंधन से आस-पास का माहौल साफ-सुथरा बना रहता है। गांधीजी ने मानव और पशु मल-मूत्र से खाद बनाने का सुझाव दिया। ऐसी जैविक खाद मिट्टी को हमेशा उपजाऊ बनाती है, उसका नुकसान नहीं करती। स्वच्छता मन को मात्र पावन ही नहीं करती, यह शरीर को आरोग्य भी प्रदान करती है। गांधीजी का मानना था कि लोगों को ज्यादातर रोग गंदगी और अस्वास्थ्यकर रहन-सहन की वजह से होते हैं।

अच्छे स्वास्थ्य के लिए खान-पान, ताजा हवा, व्यायाम, साफ-सुथरा घर और पड़ोस और पवित्र हृदय जैसे प्रकृति के नियमों के अनुरूप जीना ज़रूरी है। गांधीजी चाहते थे कि लोगों को दवाओं पर कम, और प्रकृति पर ज्यादा निर्भर रहना चाहिए। उन्होंने आस-पास ही प्रकृति में सहज रूप से मिलने वाले औषधीय पौधों और जड़ी-बूटियों के इस्तेमाल के बारे में बताया। सम्पूर्ण और संतुलित आहार प्राकृतिक चिकित्सा में बहुत महत्वपूर्ण है। उन्होंने बताया कि भोजन में पत्तीदार सब्जियों के इस्तेमाल से शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। इनके इस्तेमाल से रोगों से मुक्ति मिलती है और स्वस्थ जीवन मिलता है। पत्तीदार सब्जियों से कई विटामिन मिलते हैं। गांधीजी शाकाहारी भोजन के पक्षधर थे। लेकिन वह किसी के मांसाहार का विरोध नहीं करते थे और मानते थे कि लोग भोजन

आदर्श गांव को अपनी स्वच्छता-व्यवस्था कर सकने में सक्षम होना चाहिए। इसमें आवास के लिए जो कुटिया होनी चाहिए उनमें पर्याप्त रोशनी और हवा की आवा-जाही होनी चाहिए; ये ऐसी सामग्री से निर्मित होनी चाहिए जो आस-पास पांच किलोमीटर के दायरे में मिल सकें।

में पूरी तरह अहिंसक नहीं हो सकते। मछली खाने वालों से भी उनका कोई विरोध नहीं था।

अंत्योदय से सर्वोदय तक

गांधीजी का स्वराज गरीब-वंचित का स्वराज है। उनके स्वराज के सपने में सबकी बुनियादी ज़रूरतें पूरी होंगी। सभी को पर्याप्त वस्त्र, दूध और दूध के उत्पादों सहित पर्याप्त भोजन, अच्छा आवास, स्वास्थ्य-सेवाएं और सांस्कृतिक जीवन को समृद्ध बनाने के अवसर मिलें। गांधीजी चाहते थे कि श्रम के लिए न्यूनतम मजदूरी तय हो। न्यूनतम मजदूरी कम से कम इतनी हो कि सभी कामगारों को संतुलित और पोषक भोजन पर्याप्त मात्रा में मिल सके, कपड़ों की न्यूनतम ज़रूरतें पूरी हों, ठीक-ठीक आवास हो और सामान्य जीवन के आराम भी उसे सुलभ हों। स्वराज के सिद्धांतों के आधार पर चलाए जा रहे गांवों में सभी का सामाजिक स्तर समान होना चाहिए।

सर्वोदय की धारणा बड़ी व्यापक है। इसमें सतत और टिकाऊ विकास के दायरे में आने वाले ग्रामीण जीवन के सभी पक्ष और गतिविधियां शामिल हो जाती हैं। ग्रामीण विकास मात्र कृषि का विकास नहीं है। इसमें प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रों की सभी उत्पादक गतिविधियां शामिल होनी चाहिए। गांधीजी का ग्राम विकास का आदर्श 'समग्र ग्राम सेवा' शब्द में निहित है। इसमें समेकित और अनेक फसल लेने वाली जैविक खेती, पशुपालन, वानिकी, मात्स्यिकी, बुनियादी तालीम, प्रौढ़ शिक्षा, कमजोर वर्गों का विकास, महिला सशक्तीकरण, जन स्वास्थ्य/स्वच्छता/आरोग्य की शिक्षा, सामाजिक सद्भाव, नशा निषेध, प्राकृतिक चिकित्सा और बुनियादी साधनों-सुविधाओं के ढांचे का विस्तार आदि अनेक बातें शामिल हैं। गांधीजी का मानना था कि समाज के सबसे वंचित-दुर्बल वर्गों के विकास यानी 'अंत्योदय' के बाद ही पूरे समाज का विकास यानी 'सर्वोदय' संभव है।

समेकित कृषि

गांधीजी चाहते थे कि कृषि ग्रामीण जीवन का उजला और खुशहाल पक्ष बने। उन्होंने बढ़िया फसल के लिए बेहतर सिंचाई प्रणालियों और जैविक खाद के महत्व पर ज़ोर दिया। गांवों में कुएं खोदने, तालाबों का

दायरा बढ़ाने और उनकी गाद साफ करने तथा नहरें बनाने के अभियान चलाए जाने चाहिए। पर्याप्त पानी न हो तो खाद डालना भी नुकसानदेह हो सकता है इसलिए बिना समुचित सिंचाई-व्यवस्था के खाद का लाभ भी नहीं होगा। गांधीजी ने कचरे, मवेशियों के मूत्र और गोबर और पत्तों आदि से जैविक खाद बनाने पर ज़ोर दिया।

गांधीजी ने किसानों को रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के स्थान पर जैविक खादों का इस्तेमाल करने को कहा। रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक मिट्टी की ऊपरी उपजाऊ परत के रासायनिक और जैविक स्वरूप के लिए नुकसानदेह होते हैं और इसी ऊपरी परत में पैदावार होती है। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों से तुरंत तो खूब ज्यादा पैदावार मिलती है लेकिन अंततः ये मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बर्बाद कर देते हैं।

परस्पर सहयोग और सहकारिता

गांधीजी का मानना था कि सहयोग और सहकारिता से ही सबका लाभ हो सकता है और आर्थिक समानता आ सकती है। लोगों को सभी के हित में काम करते हुए परस्पर सहयोग से रहना चाहिए। गांधीजी ने कृषि का पूरा लाभ पाने के लिए सहकारी खेती अपनाने पर बल दिया। उन्होंने सुझाव दिया कि कृषि उपज बढ़ाने के लिए किसानों को चुनिन्दा और बेहतर क़िस्मों के बीजों को बोना चाहिए।

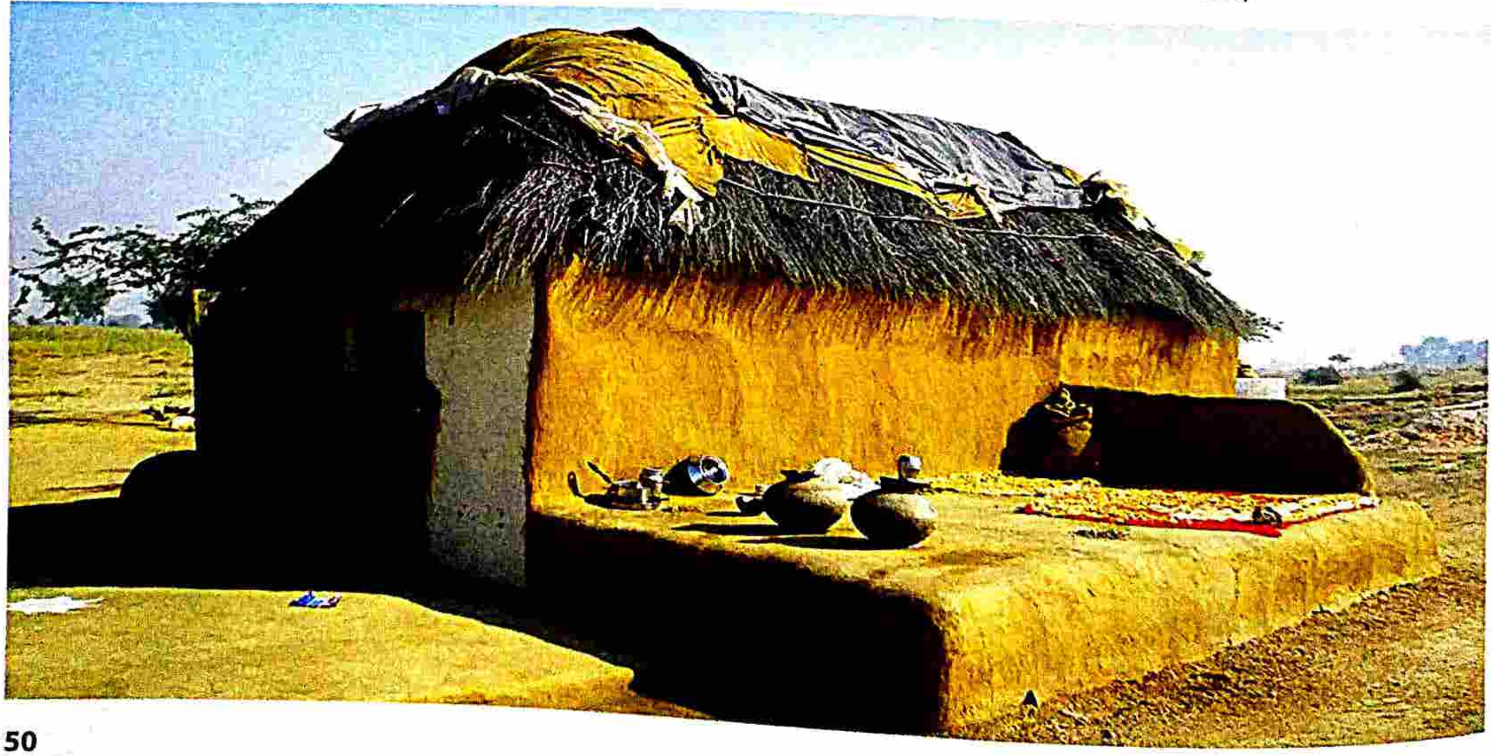

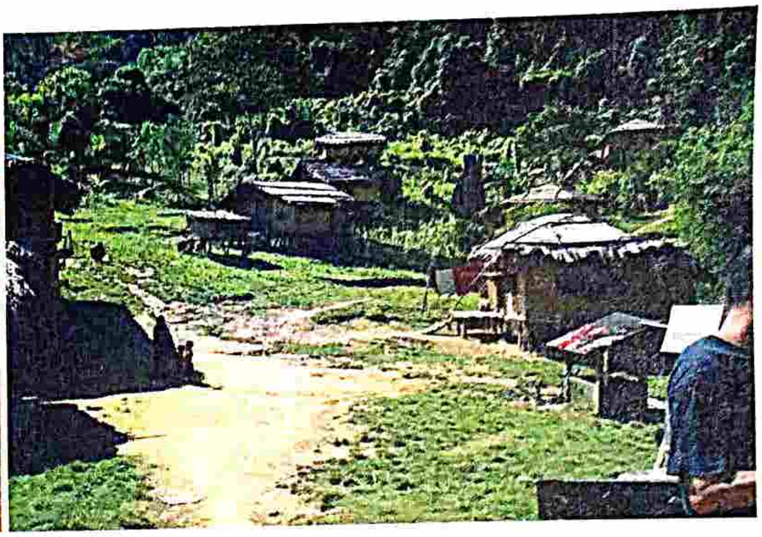

खादी और ग्रामोद्योग

गांधीजी ने गांवों की गरीबी, बेरोज़गारी और पिछड़ेपन को दूर करने के लिए खादी और ग्रामोद्योगों को बढ़ावा देने पर बल दिया। उनका मानना था कि खादी के साथ-साथ मधुमक्खी-पालन, साबुन बनाने, चमड़ा कमाने, मिट्टी के बर्तन बनाने, बढ़ईगीरी, लोहारी, तेल पिराई जैसे ग्रामीण धंधों को बढ़ावा देने से ही गांवों की निरंतर प्रगति हो सकती है। ग्रामोद्योगों और खादी का विकास साथ-साथ करना होगा।

उचित टेक्नोलॉजी

गांधीजी चाहते थे कि टेक्नोलॉजी से सबको रोज़गार तो मिले ही, आर्थिक प्रगति और सामाजिक न्याय का लक्ष्य भी हासिल हो। उनका कहना था कि मशीनों की अपनी जगह है, लेकिन वे आवश्यक मानवीय श्रम की जगह न ले लें। मशीनों को सबके हितों की रक्षा करनी चाहिए। छोटे औजारों, कल-पुर्जो वाली मशीनरी से मानवीय श्रम की बचत होती है और लाखों-करोड़ों ग्रामीण जनों का बोझ हल्का होता है। हमें ऐसी मशीनें चाहिए जो व्यक्ति की मदद करे, उसकी कार्यकुशलता को बढ़ाए, जिसे मनुष्य अपनी मर्जी से चला सके और जो मनुष्य को अपना गुलाम न बनाए। हर व्यक्ति को मदद करने वाली मशीनें स्वीकार्य हैं। लेकिन सबसे ज्यादा महत्व तो व्यक्ति को ही मिलना होगा। उसके श्रम को कम करना हमारा उद्देश्य हो सकता है। हर देश को अपनी परिस्थितियों और जरूरतों के अनुरूप टेक्नोलॉजी अपनानी होगी। अपनी परिस्थितियों के अनुरूप टेक्नोलॉजी के गांधीजी के विचार ई.एफ़. शुमाखेर के 'इंटरमीडिएट टेक्नोलॉजी' के विचारों से मेल खाते हैं।

आर्थिक समानता

गांधीजी मानते थे कि भौतिक वस्तुओं का एक सीमा तक ही महत्व है। तीन आर्थिक स्थितियां होती हैं - (वस्तुओं-सुविधाओं का) अभाव, पर्याप्तता और (ज़रूरत से ज्यादा) अतिरेक। गांधीजी का मानना था कि किसी चीज का अभाव तो अच्छा नहीं है, लेकिन चीजों का ज़रूरत से ज्यादा अतिरेक भी उचित नहीं है। मनुष्य को सुख देने वाली आदर्श और उचित स्थिति तो पर्याप्तता की ही है। शुमाखेर ने भी कहा है कि पर्याप्तता की स्थिति तक आर्थिक प्रगति ही उचित है, उससे अधिक प्रगति अलोकतांत्रिक तथा घातक है और आर्थिक दृष्टि से भी लाभप्रद नहीं है। गांधीजी ने सुझाव दिया कि खादी और ग्रामोद्योगों के विकास से भौतिक वस्तुओं के बढ़े हुए उत्पादन के उपभोग में भी विकेन्द्रीकरण हो सकता है और गरीबों की आर्थिक स्थिति भी सुधर सकती है।

गांधीजी ऐसी शिक्षा को 'बुनियादी तालीम' कहते थे। यह शिक्षा जीने की कला और उत्पादक श्रम से जुड़ी है। यह बुनियादी और शिल्प-आधारित शिक्षा है। व्यावसायिक शिक्षा के साथ-साथ, ग्रामीण लोगों को बुनियादी इतिहास, भूगोल और अंकगणित की शिक्षा भी दी जानी चाहिए।

सतत और टिकाऊ विकास

गांधीजी मानते थे कि मनुष्यों को प्रकृति के साथ सामंजस्य बना कर जीना चाहिए। वह चाहते थे कि लोग खूब पेड़ लगाएं और देश की वन-समृद्धि बढ़ाएं। वनों का जलवायु पर सुखद प्रभाव पड़ता है और बहुत अधिक गर्मी और सर्दी का असर कम हो जाता है। वनों के फैलाव से मिट्टी का संरक्षण होता है और नमी का नियमन होता है। उद्योगों के लिए ज़रूरी अनेक प्रकार की सामग्री वनों से प्राप्त होती है। घर बनाने की सामग्री भी वनों से मिलती है। वन अनेक जीव-जंतुओं का आवास भी होता है। गांवों के लोगों के उपयोग की बहुत सी चीजें- जलावन के लिए ईंधन, घर बनाने के लिए लकड़ी और मवेशियों के लिए चारा वनों से मिलता है।

निष्कर्ष

गांधीजी की जीवनदृष्टि का सार है- सबका हित और कल्याण। इस जीवन-दृष्टि में समेकित कृषि, खादी और ग्रामोद्योग, स्वच्छता और आरोग्य, ग्राम पंचायत, आत्म-निर्भरता, बुनियादी तालीम, सामाजिक मेल-जोल, सत्य और अहिंसा, सबके लिए अनिवार्य शारीरिक श्रम, संतुलित भोजन और प्राकृतिक चिकित्सा शामिल हैं। वह गांवों के समग्र विकास की बात सोचते हैं। ग्रामीण विकास की उनकी दृष्टि में, केवल लोगों के जीवन स्तर और जीवन की गुणवत्ता को सुधारने की ही चिंता नहीं है, बल्कि नैतिकता, शांति और सबके लिए न्याय और स्वतन्त्रता सुनिश्चित करना भी शामिल हैं। उनका उद्देश्य अंत्योदय के जरिए सर्वोदय लाना और गांवों को ज्यादा से ज्यादा आत्म-निर्भर बनाना है। ऐसे गांवों में किसी को भी भोजन, वस्त्र और आवास की बुनियादी जरूरतों का अभाव नहीं झेलना होगा। सभी को अपने ठीक तरीके से गुजारे के लिए काम मिलेगा। ■

मादक पदार्थों की लत से छुटकारा

सतभान सिंह

भारत में, मादक पदार्थों का सेवन कम करने के लिए विधायी उपायों सहित विभिन्न प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन इनकी खामियां इस बात को उजागर करती हैं कि इस दिशा में नए और अधिक उपायों तथा नीतियों की आवश्यकता है। इसके लिए ऐसे दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जो मादक पदार्थों की लत से छुटकारा दिलाने के लिए समुदाय को सामूहिक रूप से प्रयासों के लिए प्रेरित कर सके। ऐसे कार्यक्रमों की दक्षता और प्रभावकारिता बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग नियामकों, नीति निर्माताओं और इस क्षेत्र में काम करने वाले लोगों के बीच सक्रिय संचार और सीमाओं का विस्तार करेगा।

भारत में मादक पदार्थों के सेवन के तरीकों और परिमाण को समझने के लिए भारत सरकार के सामाजिक न्याय तथा अधिकारिता मंत्रालय और राष्ट्रीय मादक पदार्थ निर्भरता उपचार केंद्र, एम्स, नई दिल्ली ने संयुक्त रूप से प्रयास किए हैं। यह, देशभर में मादक पदार्थों के सेवन के बारे में अनुमानों के मानचित्रण की एक तरह की पहल थी। इसके निष्कर्षों को फरवरी 2019 में जारी किया गया था।

शोध में पाया गया कि भारतीय, शराब का सबसे अधिक सेवन करते हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में लगभग सोलह करोड़ लोग शराब का सेवन करते हैं। इनमें 10-75 वर्ष के बीच की आयु के लोगों की संख्या 14.6 प्रतिशत है। रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि शराब के बाद भांग और अफीम का अधिक सेवन किया जाता है (आबादी का 2.8 प्रतिशत)। इसके बाद कई अन्य मादक पदार्थों का सेवन करने वालों का स्थान आता है। यह रिपोर्ट मादक पदार्थों के सेवन को कम करने की देश की आवश्यकता को समझने के लिए सही दिशा में पहला कदम था।

रिपोर्ट में, स्थिति से निपटने के लिए संसाधनों की बड़ी कमी पर भी प्रकाश डाला गया है। भारत में 134 करोड़ से अधिक लोगों की देखभाल करने के लिए केवल 9000 प्रशिक्षित मनोचिकित्सक और लगभग 1800 नैदानिक मनोवैज्ञानिक हैं। देश में सरकार द्वारा संचालित 122 नशामुक्ति केंद्र, 29 ड्रग ट्रीटमेंट सेंटर (डीटीसी) और 216 ओपिओएड सब्स्टीट्यूशन थेरेपी (ओएसटी) केंद्र हैं। इस प्रकार की सुविधाएं काफी कम होने के कारण बहुत से लोग मादक पदार्थों की लत के शिकार हो रहे हैं। इसे देखते हुए, भारत को ऐसे लोगों के लिए देखभाल सेवाओं में निवेश करने और संसाधनों के आवंटन का अधिकतम उपयोग करके, इन सेवाओं को बेहतर बनाने की जरूरत है।

मीडिया में हॉल में नशीले पदार्थों के सेवन के मुद्दे को महत्व नहीं देने के कारण इस समस्या पर काबू पाने में मदद नहीं मिल पाती। जहां स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय तथा सामाजिक न्याय एवं

लेखक एसपीवाईएम में संचार विशेषज्ञ हैं। ईमेल: satbhan8910@gmail.com

अधिकारिता मंत्रालय, कई गैर-सरकारी संगठन और समुदाय आधारित संगठन नशीले पदार्थों के सेवन में कमी करने के उपायों में कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं, वहीं मीडिया के कुछ वर्ग असंवेदनशील रिपोर्टिंग और धारणा के साथ काम करते हैं और उनके प्रयासों को धूमिल कर देते हैं। नशीले पदार्थों के सेवन के मुद्दे को महत्व नहीं देने के कारण, इस समस्या पर काबू पाने के कार्य, दशकों पीछे छूट जाते हैं। रिपोर्टों में नशीले पदार्थों के सेवन के बारे में चर्चा करने के लिए आवश्यक बारीकियों की कमी के कारण ऐसा दिखाया गया कि यह व्यसन केवल अमीर और समर्थ लोगों में होता है जबकि यह वास्तविकता से परे है।

यदि उसी मीडिया ने कुछ शोध किया होता या दस्तावेजी साक्ष्य दिए होते तो यह तथ्य सामने आता कि नशीले पदार्थों के सेवन की समस्या का सीधा संबंध कम आय वाले और वंचित वर्ग के लोगों से है।

मादक पदार्थों के सेवन की लत से छुटकारा पाने के उपाय अगर जल्दी शुरू कर दिए जाएं तो जीवन के बाद के वर्षों के बजाय इस स्तर पर इसे रोकना आसान होता है। स्कूल में जागरूकता और संवेदनशीलता कार्यक्रम इस व्यसन को नियंत्रित करने के लिए दीर्घकालिक उपाय साबित होंगे। यहां इस बात का ध्यान रखना होगा कि विद्यार्थियों को दी जाने वाली जानकारी तथ्यात्मक, उद्देश्यपूर्ण तथा सूचनात्मक होनी चाहिए और यह संदेशों के बजाय साक्ष्यों द्वारा समर्थित होनी चाहिए। मादक पदार्थों और उनके उपयोग के तथ्यों से संबंधित संदेशों के संपादन के लिए शिक्षण और सीखने के सहायकों का उपयोग किया जा सकता है। पावर प्वाइंट प्रेजेंटेशन, फिल्म, रोल प्ले, प्रश्नावली, प्रतिज्ञा और हेल्प लाइन नंबरों को जागरूकता कार्यक्रमों का हिस्सा बनाया जाना चाहिए जो छात्रों और शिक्षकों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करता है।

इसके अलावा, मादक पदार्थों के सेवन के खिलाफ सामुदायिक प्रयासों को मजबूत करने की आवश्यकता है। निवारक और उपचारात्मक रणनीतियों की एक श्रृंखला सहित बच्चों और किशोरों में मादक पदार्थों लत छुड़ाने के लिए साक्ष्य आधारित प्रयासों

नशीले पदार्थ के सेवन की रोकथाम

पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। इन में स्कूल, स्थानीय समुदाय और संस्थागत तथा स्वास्थ्य देखभाल निकाय शामिल हैं। उद्देश्य आमतौर पर बच्चों, किशोरों और युवाओं में स्वस्थ जीवन और जीवन शैली को बढ़ावा देना है। इसके लिए समुदाय में रोकथाम और उपचार के एक एकीकृत मॉडल को विकसित करने की आवश्यकता होगी। स्थानीय संगठन, समुदाय के सदस्य और लक्षित आबादी, समुदाय आधारित सेवाओं के एक एकीकृत नेटवर्क की स्थापना में सक्रिय रूप से शामिल हैं जो समुदाय के भीतर ही सतत रूप से व्यवहार परिवर्तन को सशक्त और प्रोत्साहित करते हैं।

भारत में, मादक पदार्थों का सेवन कम करने के लिए विधायी उपायों सहित विभिन्न प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन इनकी खामियां इस बात को उजागर करती हैं कि इस दिशा में नए और अधिक उपायों तथा नीतियों की आवश्यकता है। इसके अलावा, देखभाल की आवश्यकता वाले लोगों के लिए सेवा प्रदाताओं का अनुपात बहुत कम है। राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार मादक पदार्थों के सेवन के मामले में, उपचार का अंतर 90 प्रतिशत है। शराब के उपयोग के लिए, यह काफी अधिक यानी 97.2 प्रतिशत है। पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित पेशेवरों की कमी इस समस्या को और बढ़ा देती है। अन्य कारक जैसे कि नशामुक्ति केंद्रों, प्रभावी सेवाओं और सार्वजनिक निजी भागीदारी की कमी सेवा प्रदाताओं और जरूरतमंदों के बीच की खाई को गहरा करती है।

मादक पदार्थों के सेवन की लत छुड़वाने और इस व्यसन के खिलाफ जागरूकता फैलाने के लिए आवश्यक पर्याप्त संख्या में पेशेवर तथा धनराशि और बुनियादी ढाँचा नहीं है। इस समस्या के समाधान के लिए न केवल पेशेवरों के लिए अधिक धनराशि की जरूरत है, बल्कि यह सुनिश्चित करने की भी आवश्यकता है कि सभी आवश्यक आवश्यकताओं को पूरा किया जाए। भर्ती रोगियों के लिए सेवाओं, पुनर्वास सेवाओं, बाहरी रोगियों के लिए सेवाओं और सूचना, शिक्षा व संचार गतिविधियों के लिए अनुसंधान तथा विकास के वास्ते संसाधनों का आवंटन किया जाना चाहिए। मादक पदार्थों के सेवन की लत वाले लोग काफी संवेदनशील होते हैं क्योंकि सहरुग्णता के कारण वे बहुत कमजोर होते हैं और इसे केवल बहुविषयक सहयोग से कम किया जा सकता है। आम लोगों के शिक्षण तथा संवेदीकरण और आयुष तथा हीलर जैसे अन्य स्वास्थ्य चिकित्सक मजबूत रेफरल सिस्टम विकसित करने में मदद कर सकते हैं।

इनके अलावा इस समस्या से निपटने के लिए ऐसे दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो मादक पदार्थों की लत से छुटकारा दिलाने के लिए समुदाय को सामूहिक रूप से प्रयासों के लिए प्रेरित कर सके। ऐसे कार्यक्रमों की दक्षता और प्रभावकारिता बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग नियामकों, नीति निर्माताओं और इस क्षेत्र में काम करने वाले लोगों के बीच सक्रिय संचार और सीमाओं का विस्तार करेगा। ■

मादक पदार्थों के सेवन की लत वाले लोग काफी संवेदनशील होते हैं क्योंकि सहरुग्णता के कारण वे बहुत कमजोर होते हैं और इसे केवल बहुविषयक सहयोग से कम किया जा सकता है। आम लोगों के शिक्षण तथा संवेदीकरण और आयुष तथा हीलर जैसे अन्य स्वास्थ्य चिकित्सक मजबूत रेफरल सिस्टम विकसित करने में मदद कर सकते हैं।

क्या आप जानते हैं?

भारत का संविधान
सामाजिक न्याय और अधिकारिता से संबंधित विशेष उद्धरण

संविधान का भाग	अनुच्छेद
उद्देशिका	"................................ उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय; प्राप्त कराने के लिए ****** प्रतिष्ठा और अवसर की समता; तथा उन सब में व्यक्तियों की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए।'' उद्देशिका में उल्लिखित क्रमश: प्रथम, तृतीय और चतुर्थ लक्ष्य/ध्येय हैं।
मूल अधिकार	**23. मानव के दुर्व्यापार और बलात्श्रम का प्रतिषेध...** (1) मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार का अन्य बलात्श्रम प्रतिषिद्ध किया जाता है और इस उपबंध का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा। (2) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए अनिवार्य सेवा अधिरोपित करने से निवारित नहीं करेगी। ऐसी सेवा अधिरोपित करने में राज्य केवल धर्म, मूलवंश, जाति या वर्ग या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।
	24. कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिषेध... चौदह वर्ष से कम आयु के किसी बालक को किसी कारखाने या खान में काम करने के लिए नियोजित नहीं किया जाएगा या किसी अन्य परिसंकटमय नियोजन में नहीं लगाया जाएगा।
राज्य की नीति के निदेशक तत्व	**37. इस भाग में अंतर्विष्ट तत्वों का लागू होना** इस भाग में अंतर्विष्ट उपबंध किसी न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं होंगे किंतु फिर भी इनमें अधिकाधिक तत्व देश के शासन में मूलभूत हैं और विधि बनाने में इन तत्वों को लागू करना राज्य का कर्त्तव्य होगा।

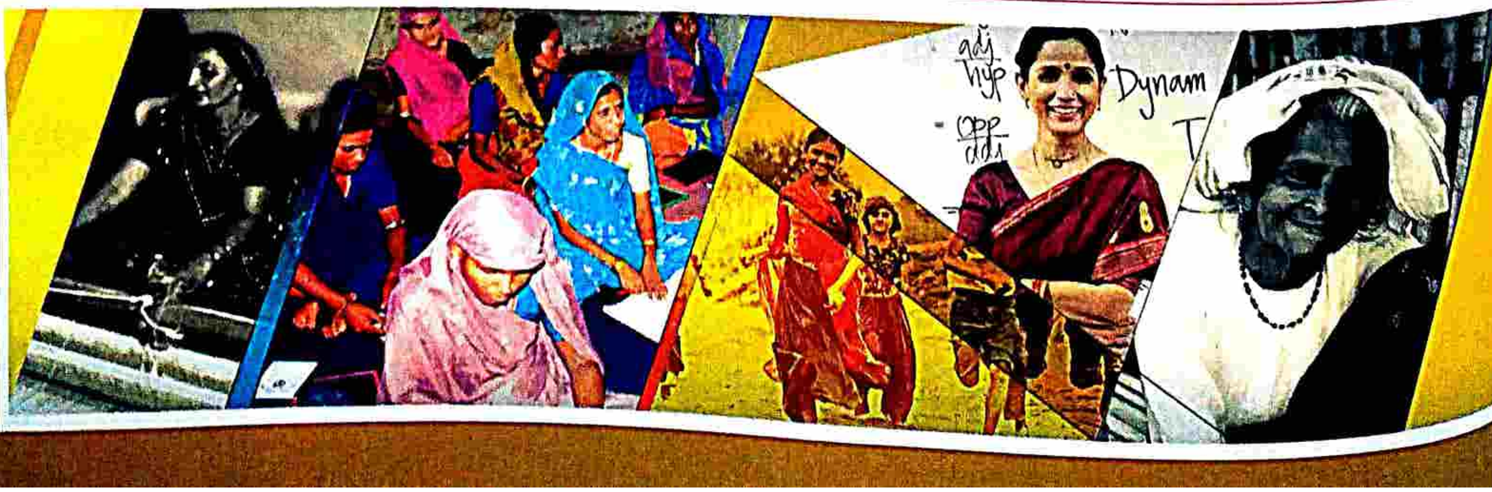

राज्य की नीति के निदेशक तत्व	**38. राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा...** (1) राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्रमाणित करे, भरसक प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा। (2) राज्य, विशिष्टतया, आय की असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा और न केवल व्यष्टियों के बीच बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच भी प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा।
	39. राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्व... राज्य अपनी नीति का, विशिष्टतया, इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से... (क) पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो; (ख) समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बंटा हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो; (ग) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले जिससे धन और उत्पादन-साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी संकेंद्रण न हो; (घ) पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो; (ङ) पुरुष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोज़गारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों; (च) बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं दी जाएं तथा बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाए।
	39. समान न्याय और निःशुल्क विधिक सहायता... राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक तंत्र इस प्रकार काम करे कि समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो और वह विशिष्टतया, यह सुनिश्चित करने के लिए कि आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए, उपयुक्त विधान या स्कीम द्वारा या किसी अन्य रीति से निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा।
	46. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि... राज्य, जनता के दुर्बल वर्गों के, विशिष्टतया, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा तथा सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा।

स्रोत: http://socialjustice.nic.in/

योजना - सही विकल्प

'योजना' के अगस्त-2020 अंक से हमने पाठकों के लिए, खास तौर से सिविल सर्विसेज़ तथा अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने वाले प्रतिभागियों के लिए बहुविकल्प प्रश्नों का स्तंभ 'योजना-सही विकल्प' शुरू किया है। इसमें 'योजना' के अंकों में प्रकाशित आलेखों/सामग्री से या फिर प्रतियोगी परीक्षाओं में पूछे जाने वाले ज्ञान के आधार पर प्रश्नों एवं विकल्पों को तैयार किया गया है।

1. हड़प्पा सभ्यता स्थल-लोथल, स्थित है-

क) गुजरात में

ख) पंजाब में

ग) राजस्थान में

घ) सिंध में

2. रिहला किसमें लिखी गई थी?

क) चौदहवीं शताब्दी में इब्न बतूता द्वारा अरबी में

ख) पंद्रहवीं शताब्दी में अब्दुर्रज़्ज़ाक द्वारा फ़ारसी में

ग) तेरहवीं शताब्दी में इब्न बतूता द्वारा फ़ारसी में

घ) तेरहवीं शताब्दी में मार्को पोलो द्वारा इतालवी (इटैलियन) में

3. 1309 और 1311 के बीच मलिक काफूर ने दक्षिण भारत में दो अभियान संचालित किए। इन अभियानों का महत्व इसमें निहित है कि-

1. इनमें दिल्ली शासकों की ओर से उच्च कोटि की निर्भीकता और साहस की भावना प्रतिबिम्बित हुई।
2. आक्रमणकारी अकूत दौलत के साथ दिल्ली लौटे।
3. उनसे नवीन भौगोलिक ज्ञान मिला।
4. अलाउद्दीन ने मलिक काफूर को मलिक-नायब या साम्राज्य के उपराज्य के ओहदे पर पदोन्नत किया।

नीचे दिए गए कूट का प्रयोग कर सही उत्तर चुनिए।

क) केवल 1 और 3

ख) केवल 1, 2 और 4

ग) केवल 2 और 4

घ) 1, 2, 3 और 4

4. भारतीय संघवाद निकट है-

क) नाइजीरिया के

ख) आस्ट्रेलिया के

ग) कनाडा के

घ) यूएसए के

5. सूची-1 को सूची-2 के साथ सुमेलित कीजिए और सूचियों के नीचे दिए गए कूट का प्रयोग कर सही उत्तर चुनिए:

सूची-1 (ग्रंथ)	सूची-2 (लेखक)
अ. किताब-अल हिन्द	1. इब्न बतूता
ब. रेहला	2. अल-बिरूनी
स. हुमायूंनामा	3. लाहोरी
द. बादशाहनामा	4. गुलबदन बेगम

कूट:

	अ	ब	स	द
क)	2	4	1	3
ख)	3	1	4	2
ग)	3	4	1	2
घ)	2	1	4	3

6. गोंडवाना क्रम की चट्टानों के संदर्भ में विचार कीजिए:

1. इस क्रम की चट्टानों का विकास कार्बोनिफेरस से जुरेसिक युग के बीच हुआ।
2. भारत का 98 प्रतिशत कोयला इसी क्रम की चट्टानों में पाया जाता है।

क) केवल 1

ख) केवल 2

ग) 1 और 2

घ) न तो 1, न ही 2

7. पृथ्वी की पपड़ी सबसे पुरानी ज्वालामुखी विस्फोट में बाहर आ जाती है और कठोर चट्टानों का रूप ले लेती है जिन्हें .... कहा जाता है?

क) तलछट्टी (Sedimentary)

ख) रूपांतरित (Metamorphic)

ग) कोमाटाइट (Komatite)

घ) आग्नेय (Igneous)

8. **निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए:**

1. राज्य सभा में धन विधेयक को या तो अस्वीकार करना या संशोधित करने की कोई शक्ति निहित नहीं है।
2. राज्य सभा अनुदानों की मांगों पर मतदान नहीं कर सकती है।
3. राज्य सभा में वार्षिक वित्तीय विवरण पर चर्चा नहीं हो सकती।

उपर्युक्त कथनों में से कौन-सा/से सही है/हैं?

क) केवल 1

ख) केवल 1 और 2

ग) केवल 2 और 3

घ) 1, 2 और 3

9. **भारत की संसद के संदर्भ में निम्नलिखित में से कौन-सी संसदीय समिति इसकी संवीक्षा करती है और सदन को सूचित करती है कि जो विनियम, नियम, उप-नियम, उप-विधि आदि बनाने की शक्तियां संविधान द्वारा प्रदत्त हैं या सदन द्वारा प्रत्यायोजित हैं, उनका कार्यपालिका द्वारा इन प्रत्यायोजनों (डेलिगेशन) की परिधि के भीतर उचित प्रयोग हो रहा है?**

क) सरकारी आश्वासनों संबंधी समिति

ख) अधीनस्थ विधान संबंधी समिति

ग) नियम समिति

घ) कार्य सलाहकार (बिज़नेस एडवाइज़री) समिति

10. **संविधान-सभा में यह किसने कहा था कि सरकारी नीति के निदेशक सिद्धांत किसी बैंक में देय उस चेक की तरह हैं, जिसका भुगतान बैंक अपनी सुविधानुसार करता है?**

क) के टी शाह

ख) के एम मुंशी

ग) बी आर अंबेडकर

घ) ऑस्टिन

सही उत्तर : 1. क, 2. क, 3. क, 4. ग, 5. घ, 6. ग, 7. घ, 8. ख, 9. ख, 10. क